महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० **अंक** : ०४

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: फाल्गुन शुक्ल २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.

त्रिवार्षिक-५८० रु.

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी द्वितीय २०१८

अनुक्रम

०१. दलित-मुस्लिम राजनीति का....	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०९
०४. यज्ञ की दक्षिणा	पं. वीरसेन वेदश्रमी	१३
०५. क्या जैनमत वेदों से भी प्राचीन है?	विरजानन्द दैवकरणि	२१
०६. श्रद्धा सुमन	प्रो. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	२३
०७. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२५
०८. 'वेदोक्त ज्योतिष एवं वेदार्थ'	शिवनारायण उपाध्याय	२७
०९. शङ्का समाधान- १९	डॉ. वेदपाल	३४
१०. आर्यनेता महाशय कृष्ण जी	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	३५
११. विश्व पुस्तक मेला और....	प्रभाकर	३७
१२. संस्था-समाचार		४०
१३. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ -

www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

दलित-मुस्लिम राजनीति का औचित्य?

श्रेष्ठ समाज का निर्माण दुष्कर कार्य है। इसके लिए उच्च आदर्श, व्यावहारिक एवं सैद्धान्तिक जीवन-पद्धति, समस्त जड़ एवं चेतन जगत् के साथ सहजीविता की उच्चतर भावना की आवश्यकता होती है। समाज में रहने वाले भिन्न मानसिकताओं और तदनुरूप जीवनयापन करने वाले जनों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे प्राणिमात्र में उत्थान के प्रति कृतसंकल्प होकर एक समतामूलक समाज के निर्माण में सहभागी होंगे। ऐसे समाज की साधना किसी तपश्चर्या से कम नहीं। परन्तु देखा यह जाता है कि स्वार्थसाधक एवं तपहीन जन क्षुद्र स्वार्थों के लिए समाज के उत्थान नहीं, प्रत्युत पतन के कारण बन जाते हैं। उनकी मनोवृत्तियाँ केवल स्वार्थसाधना में प्रवृत्त होती रहती हैं। ऐसे लोग अपने जैसे ही मनुष्यों को परम शत्रु समझकर व्यवहार करते हैं और युगों से निर्मित मानवता और भाईचारे की भावना ध्वस्त हो जाती है। ऐसा बहुधा होता आया है और पिछले दिनों देश के कुछ प्रदेशों में राजनीतिक हित साधने के लिए दलित बनाम अन्य जातियों का अकारण संघर्ष प्रारम्भ किया गया।

प्राचीन भारतीय साहित्य में '**दलित**' शब्द वर्तमान अर्थ में दृष्टिगोचर नहीं हुआ है। वहाँ वर्तमान दलित शब्द के लिए समानान्तर शूद्र, अन्त्यज आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। रामानुज ने दलितों के लिए तिरुक्कुलत्तर अर्थात् श्रेष्ठ कुल, तो गांधीजी ने हरिजन शब्द का प्रयोग किया, स्वामी दयानन्द ने दलितों को आर्य (श्रेष्ठ) शब्द से अभिहित किया, लेकिन राजनीतिक विद्वेष के झंडाबरदारों ने भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्व को स्वीकार न करके केवल स्वहित के लिए अर्थात् राजनीतिक लाभ के लिए समाज में टकराव की राजनीति प्रारम्भ की। इससे समाज को एक सूत्र में बाँधने में कठिनाइयाँ हुईं। 20वीं शताब्दी में मुख्यत: दलित शब्द प्रचलन में आया जिसके समर्थक अन्यान्य प्रवर्तक 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से भारत में विभिन्न आन्दोलनों के माध्यम से दृष्टिगोचर हुए हैं। अंग्रेजी शासन के अन्तर्गत ब्रिटिश शासन की नीति के अनुसार भारत के सामाजिक ढाँचे को छिन्न-भिन्न करने हेतु उन्होंने 1857 की क्रान्ति के बाद मुसलमानों एवं हिन्दुओं के अन्य सम्प्रदायों को मुख्य धारा से अलग करने का प्रयास किया और सामन्तवादी सोच के साथ नवाबों तथा धनाढ्य मुसलमानों को संरक्षण दिया। सर सैय्यद अहमद खाँ मुसलमानों के एक ऐसे ही नेता थे जिन्होंने अंग्रेजों का साथ लेकर मुसलमानों में यद्यपि आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा का पक्ष लिया, किन्तु हिन्दुओं के विरुद्ध अपना अभियान प्रारम्भ किया जिसकी परिणति 1909 के मॉर्ले मिन्टो अधिनियम में धर्म के आधार पर आरक्षण के रूप में उपजी।

मुसलमानों को धर्म के आधार पर आरक्षण देने के परिणामस्वरूप ही दलितों के उद्धार के लिए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने दलितों के आरक्षण हेतु उन्हें हिन्दुओं से पृथक् मानते हुए इसकी मांग की। महात्मा गांधी के पूना समझौते के बाद दलितों को आरक्षण दे दिया गया, लेकिन कुछ विघटनकारी शक्तियों ने राष्ट्रीय आन्दोलन में राष्ट्रीय सामाजिक शक्तियों को अंग्रेजी शासन के पक्ष में मोड़ने का प्रयास किया, जिसके परिणामस्वरूप जिन्ना ने पृथक् मुस्लिम राष्ट्र की मांग कर दी और जिसका परिणाम हमारे सामने आया **पाकिस्तान**।

डॉ. अम्बेडकर दलितों के उत्थान का विषय स्वीकार करते थे। सामाजिक न्याय के रूप में शैक्षिक और आर्थिक दोनों के विकास का ही लक्ष्य उन्होंने रखा और इसीलिए संविधान के निर्माण के समय उन्होंने मानवीय आधार पर भारत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों को स्वीकार किया। उन्होंने स्वयं बौद्ध धर्म को स्वीकार किया लेकिन वे स्वभावत: विशुद्ध भारतीय थे और भारतभूमि के प्रति उनमें अगाद्ध श्रद्धा और प्रेम के साथ समर्पण था। वे दलितों के उत्थान के तो हामी थे, लेकिन दलित-मुस्लिम गठबन्धन के आधार पर भारतीय राजनीति में नये आन्दोलन को वे स्वीकार नहीं करते थे। कालान्तर में भारतीय राजनीति में शनै:-शनै: दलित-मुस्लिम गठबन्धन की राजनीति को अन्यान्य हिन्दू सम्प्रदायों से पृथक् कर अपने राजनीतिक हितों को साधने का प्रयास सत्ताधारी सरकारों ने किया और यही प्रयास मुस्लिम-तुष्टीकरण के रूप में राजनीति में स्वीकार किया जाता रहा। लेकिन आजादी के इतने वर्षों बाद भी यह यक्ष प्रश्न उपस्थित है

कि दलितों और मुसलमानों का कितना विकास हुआ? सामाजिक न्याय की दृष्टि से आर्थिक रूप से दलित-मुस्लिम का अपेक्षित विकास दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

यह आश्चर्य का विषय है कि अब पुनः भारतीय राजनीति में जिस प्रकार दलित-मुस्लिम के अधिकारों की बात कर राजनीतिक आन्दोलन को उभारा जा रहा है, जिस प्रकार गुजरात के चुनावों में दलित और अन्य जातीय राजनीति का निस्संकोच प्रयोग किया गया, अभी हाल में पुणे के निकट कोरेगांव भीमा में महार जाति तथा अन्य मराठा जाति संघर्ष दृष्टिगोचर हुआ, जिसे स्वार्थ की राजनीति से प्रेरित राजनीतिक दलों ने पेशवायी, मराठा और दलित संघर्ष की संज्ञा से विभूषित किया और अपने राजनीतिक हितों को साधने का उपक्रम किया। कोरेगांव भीमा घटना दलितों के अर्न्तद्वन्द्व को भी स्पष्ट करती है, क्योंकि दलित अंग्रेजों की सेना में थे और शासन में पेशवा थे। अंग्रेजों ने जातीय हिंसा को बढ़ावा देने के लिए जिस तरह की व्यवस्था भारत में उत्पन्न की थी वह अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए थी और किसी प्रकार भी सामाजिक समरसता के भाव को स्पष्ट नहीं करती थी। खालिद उमर, जिग्नेश मेवाणी और राधिका बेमुला मामले का यह त्रिवेणी संगम वस्तुतः वोट बैंक की राजनीति का ही संकेत करता है। मोदी के विरुद्ध विपक्षी दलों के लिए यह मुद्दा दलित-मुस्लिम राजनीतिक एकता के रूप में कितना सार्थक हो सकेगा, यह तो इस वर्ष होने वाले कुछ राज्यों के चुनाव ही बता पाएंगे। लेकिन आर्यसमाज इस प्रकार की किसी भी दुरभिसन्धि को स्वीकार नहीं करता। सामाजिक समरसता का भाव भारत में निवास करने वाले सभी वर्गों और समूहों के उत्थान से ही निकलता है और वही सार्थक पहल होती है।

दलित-मुस्लिम एकता की राजनीति करने वाले केवल सत्ताधारी दल को हराने के लिए यह मुद्दा उछालते हैं, लेकिन उन्हें नहीं मालूम कि वे सामाजिक संरचना के ताने-बाने की सहजीवी सभ्यता को नष्ट करने का ही कार्य कर रहे हैं। यह सत्य है कि अधिकांश मुस्लिमों का धर्म परिवर्तन समाज के पिछड़े एवं दलित वर्गों से अधिक हुआ है और जिन्हें अभी भी मुस्लिम समाज में उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। यहाँ तक कि अक्सर अभिजात्य मुस्लिम वर्ग इन धर्मान्तरित मुसलमानों को मुसलमान मानने के लिए तैयार नहीं होता। हाँ, अपने राजनीतिक सरोकारों को साधने के लिए उनका सहारा अवश्य लेता है। यह कहना बिल्कुल उचित नहीं होगा कि भाजपा-विरोधी राजनीतिक दल दलित-मुस्लिम एकता के समर्थक बनकर कभी सैक्युलरवाद के नाम पर और कभी धर्म के नाम पर आन्दोलन कर अपनी राजनीति को साधने का काम करते हैं।

आर्यसमाज सामाजिक समरसता में विश्वास रखता है। इसलिए छुआछूत, ऊँच-नीच जैसी कुरीतियों का आर्यसमाज ने डटकर विरोध किया। कोरेगांव भीमा की घटना राजनीतिक रूप से वोट बैंक की राजनीति का ही हिस्सा है। जब-जब चुनाव होते हैं तब-तब विभिन्न राजनीतिक पार्टियाँ इसी प्रकार दलित और मुस्लिम का गठबन्धन बनाकर चुनाव जीतने की जुगत लगाती हैं। 2014 के चुनावों में उत्तर प्रदेश में जहाँ दलित राजनीति का सबसे ज्यादा उफान पूर्व में देखा गया था लेकिन लोकसभा के चुनावों में उन्होंने दलित राजनीति के दृष्टिकोण को नकार दिया तथा विधानसभा चुनाव 2017 में भी दलित-मुस्लिम राजनीति के गठनबन्धन की जातीय राजनीति को आम जनता ने नकार दिया।

कहने का उद्देश्य यह है कि आर्यसमाज समग्र विकास का उद्देश्य रखता है। आर्यसमाज का इतिहास इसी तथ्य का साक्षी है, इसीलिए आर्यसमाज ने वेदों के महान् विद्वानों को तैयार किया, जन्मना जाति-वर्ण का भेद इसमें नहीं रखा। व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाए तो दलितों के साथ हिन्दुओं का इतिहास बहुधा उपेक्षा और घृणा का रहा है। उनके प्रति सम्मान का दृष्टिकोण या विकास के सोपानों को देखा जाए तो विगत एक हजार वर्ष में उनके साथ अत्यन्त भेदभाव किया गया। 19वीं और 20वीं शताब्दी के सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों को देखा जाए तो यही दृष्टि उभरकर आती है। परन्तु दलितों में भी महादलित, पिछड़ा दलित, अगड़ा दलित जैसे द्वन्द्वों का उभार मानकर जाति या आरक्षण की राजनीति करना उचित नहीं होगा। लोकसभा चुनावों से पूर्व महाराष्ट्र में धर्म के आधार पर मुसलमानों को दिए गए आरक्षण को राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयोग करने का उद्देश्य रखा गया था,

लेकिन वह फलदायी नहीं हुआ।

आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता किसी भी व्यक्ति के स्वविवेक के आधार पर जीवन-दृष्टि को सम्पोषित करती है। इसीलिए विगत वर्षों में आजादी के बाद जितना उत्थान दलित और मुसलमानों का होना चाहिए था वह नहीं हो पाया, बल्कि जातीय हिंसा और तथाकथित साम्प्रदायिक हिंसा के विभिन्न दृश्य दिखाई दिए हैं। आर्यसमाज ने स्वामी श्रद्धानन्द के माध्यम से जो तथ्य महात्मा गांधी के समक्ष रखा वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है। तुष्टीकरण की नीति से समाज का सम्यक् विकास नहीं किया जा सकता और जन्म के आधार पर किसी भी व्यक्ति को श्रेष्ठ और हीन की संज्ञा में नहीं बाँटा जा सकता। उपलब्ध साधन, साधनों का प्रयोग, जीवन जीने की अभीप्सा और जीवन जीने का का सम्यक् मार्गदर्शन जब समान रूप से समाज के सभी लोगों को मिलता है तो व्यक्ति का निर्माण होता है और उसी से उस उन्नत समाज का निर्माण होगा, जिसके कारण राष्ट्र विकसित कहलाता है।

समाज में तथाकथित उच्चवर्गों के प्रति दुराग्रह की भावना से उनके मध्य घृणा पैदा करना उचित नहीं होगा। स्वयं डॉ. अंबेडकर ने 1924 में **बहिष्कृत हितकारिणी सभा** का गठन किया जिसके अध्यक्ष सर चिमनलाल सीतलवाड़, डॉ. आर.पी. सिंह परांजपे, जे.एन. नरिमन, पी.जी. खेर, रामरुस्तम जी निवाला जैसे लोग थे। यहाँ ये प्रश्न उपजता है कि क्या इसके सभी सदस्य दलित थे? यहाँ तक कि 1928 में जब दलित पत्र **समता** का मराठी में प्रकाशन शुरू हुआ तो इसके सम्पादक जन्मना ब्राह्मण देवराव विष्णु थे। लेकिन राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की दुरभिसन्धि में समाज में विद्वेष फैलाकर स्वार्थों की पूर्ति का प्रयास इतने वर्षों में देखा गया, उससे लाभ प्राप्त नहीं हुआ। समाज में स्नेह और प्रेम के साथ ही शिक्षा को आधार बनाकर जब विकास किया जाएगा तभी राष्ट्रप्रेम और विश्वप्रेम उत्पन्न होगा। राजनीतिक दलों द्वारा अपने स्वार्थों के लिए सामाजिक, साम्प्रदायिक विद्वेष की आग में घी डालने से उनकी पार्टियों को भले ही सामयिक लाभ मिल जाए, लेकिन सामाजिक समरसता पर जो घाव लगे हैं और आगे लगेंगे वे भर पाएंगे, यह कहना ऐतिहासिक अनुभवों के आधार पर संभव नहीं होगा। अतः अपेक्षा है कि वैचारिक मुद्दे ही विभिन्न राजनीतिक दलों के अनुसार होने चाहिंए ताकि सामाजिक और धार्मिक आन्दोलन मानव के निर्माण की भूमिका में सक्रिय योगदान दे सकें। डॉ. अम्बेडकर के आदर्श महात्मा बुद्ध को भी यही समतावादी समाज पसन्द था और यही वेद का संदेश है-

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथापूर्वे सञ्जानाना उपासते।।

- ऋग्वेद

- दिनेश

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

प्रवचनमाला-१६

मृत्यु सूक्त
(भूमिका)

डॉ. धर्मवीर

आचार्य धर्मवीर जी द्वारा वेद के सूक्तों पर दिये प्रवचनों की मांग प्रायः आती रहती है। ये व्याख्यान वेदमन्त्रों पर होने से वेद को आमजन के लिये भी बुद्धिगम्य बना देते हैं। इसे ध्यान में रखते हुए इस प्रवचनमाला में इन्हीं व्याख्यानों को क्रमशः दिया जा रहा है। पाठक इस वेदज्ञान की गंगा में स्नान का आनन्द लें। **-सम्पादक**

हमारा यह वेद-ज्ञान की चर्चा का प्रसंग चल रहा है। हम ऋग्वेद के १०वें मण्डल के १८ वें सूक्त, जिसको मृत्यु सूक्त कहते हैं, हम उसकी चर्चा कर रहे हैं। इसका ऋषि यामायनः और इसका देवता मृत्यु है। इसका छन्द-त्रिष्टुप है। इसमें मृत्यु के बारे में चर्चा की गई है। वैसे तो हममें से ऐसा कौन व्यक्ति है जो मृत्यु के बारे में जानता नहीं है। लेकिन शायद सबसे जटिल प्रश्न भी यही है। इसका हर व्यक्ति हर समय अनुभव करता है, परन्तु इसके यथार्थ को चाहकर भी जान नहीं पाता। मृत्यु ऐसा शब्द है जो मूल रूप से एक अर्थ देता है कि कोई एक वस्तु थी जो अब नहीं रही। वस्तु के लिए भी, समय के लिए भी, कोई और पदार्थ है, व्यक्ति है, प्राणि है सबके लिये ये बात लागू होती है। जो भी बात हमारे मस्तिष्क में आती है, एक समय में वो आती है, होती है और चली जाती है। यह परिस्थिति सबके साथ सब समयों में है और इस परिस्थिति से ही हम इस मृत्यु को समझते हैं या मृत्यु इस परिस्थिति का ही एक नाम है। संसार में हर वस्तु पहले थी नहीं, अब हो गई, बाद में नहीं रहेगी, या नहीं रही, यह क्रम निरन्तर चल रहा है और यह क्रम जैसे वस्तुओं में, पदार्थों में चल रहा है, वैसे ही प्राणियों में भी चल रहा है और यह एक ओर से नहीं चल रहा है।

मृत्यु किसी घटना का एक भाग है। जब तक उसका दूसरे भाग से संबन्ध न हो तो इसका कोई मूल्य नहीं, कोई अर्थ नहीं, कोई उपस्थिति नहीं, क्योंकि मृत्यु तब होती है, जब कोई अस्तित्व में हो, अस्तित्व में आ चुका हो। जो अस्तित्व में ना आया हो, जो उत्पन्न न हुआ हो, जो प्रकट न हुआ हो, उसकी मृत्यु कैसे होगी? किसी का प्रकाश में आना, उत्पन्न होना, दिखाई देना, उसका उपस्थित रहना और उसका अन्तर्धान या तिरोधान हो जाना- यह एक क्रम है। बाकि वस्तुओं में तो हम उसे कहते हैं-उत्पत्ति, स्थिति और विनाश। लेकिन मनुष्य में इन्हीं शब्दों को हम कहते हैं-जन्म, जीवन और मृत्यु। अर्थात् हमारी उपस्थिति का बने रहना-यह जीवन है और उसका समाप्त हो जाना, अदृश्य हो जाना, अव्यक्त में लीन हो जाना-यह मृत्यु है। यह सच है, किन्तु हमारे हाथ में कुछ नहीं है। हमारी इच्छा से, हमारे वश में नहीं है। इसको समझने के लिए एक प्रसंग आपको याद दिलाना चाहूँगा। चरक में एक अध्याय है, उसका नाम है तिस्रैषणीय अध्याय। तिस्रः तीन को कहते हैं, एषणा इच्छा को कहते हैं। वैसे तो सामान्य व्यवहार में साधु संत लोग कहते हैं कि हमें अपनी तीन तरह की इच्छायें छोड़ देनी चाहिए, उनका त्याग करना चाहिए, उनके वशीभूत नहीं होना चाहिए। उनका नाम लोक में है-प्राणैषणा, पुत्रैषणा, वित्तैषणा। जीवित रहने की जो हमारी इच्छा है-प्राणैषणा। हम जो इच्छायें करते हैं, उन इच्छाओं के कारण हम संसार में चलते रहते हैं। **वित्तैषणा**-धन की इच्छा, **पुत्रैषणा**-संतान की इच्छा, **लोकैषणा**-प्रशंसा की, यश की इच्छा। यह सभी प्राणियों में, विशेष रूप से मनुष्यों में रहती है और मनुष्य इनसे वशीभूत हुआ रहता है। उसका अस्तित्व संतान के माध्यम से, उसका जीवन धन के माध्यम से, उसका मनोबल जन-सामान्य के माध्यम से हर समय पुष्ट होता है, बनता है, बढ़ता है। इसलिए जब व्यक्ति संन्यास लेता है, तब वह यह कहता है कि मैं **अभयं सर्वभूतेभ्यः**, अब मैं सब भूतों को, सब प्राणियों को अभयदान दे रहा हूँ।

''वित्तैषणा, पुत्रैषणा, लोकैषणा मया परित्यक्ता।'' आज से मैं वित्तैषणा से, पुत्रैषणा से, लोकैषणा से दूर हो रहा हूँ, इनका परित्याग कर रहा हूँ। आचार्य चरक ने इनको एक और तरह से कहा है। उन्होंने इनका नाम दिया है प्राणैषणा, धनैषणा, परलोकैषणा। प्राण पहले मिलते हैं, उसके बाद धन, उसके बाद परलोक। यह हमारे जन्म, जीवन और मृत्यु से जुड़ी हुई बात है। हमें जो जन्म मिला है, जो प्राण मिले हैं, यह प्राण हमारे बने रहें, इसका जो उपाय है वो धन है, साधन है, भोजन है और इसके बाद हमारी यात्रा अनुकूल हो, अच्छी हो, यह परलोकैषणा है। अर्थात् मनुष्य में ये तीनों इच्छाएं सदा रहती हैं। इसलिए पहली

चीज है प्राणैषणा। यह कैसे बनी रहती है? तीन बातें हैं-जन्म है, जीवन है, मृत्यु है। आचार्य चरक कहते हैं कि यह हमारे हाथ में नहीं है। न जन्म हमारे हाथ में है, न जीवन को इच्छानुसार चलाना हमारे हाथ में है और न ही मृत्यु हमारे हाथ में है। हम उसको टाल भी नहीं सकते, चाहकर बुला भी नहीं सकते। परमेश्वर की व्यवस्था से हमारा जन्म होता है, परमेश्वर की व्यवस्था से हमारा जीवन सुखमय, सुविधामय, साधनसंपन्न, जैसा अधिक कम मिलता है और हम कब इस संसार से जायेंगे, यह भी हमारे हाथ में नहीं है, इसको भी परमेश्वर करता है। जन्म क्या है? शरीर और आत्मा का जो संयोग है, इस संयोग का होना- यह जन्म है। संयुक्त होकर जब मनुष्य माता-पिता के द्वारा संसार में आता है, तो उसका यह संयोग जन्म कहाता है। इस संयोग का बना रहना जीवन कहलाता है और इस संयोग का वियोग में बदल जाना, शरीर का आत्मा से अलग हो जाना, यह मृत्यु कहलाता है। यह हमारी इच्छा से नहीं होता। आचार्य चरक कहते हैं-''**त्रय उपस्तम्भा शरीरस्य।**'' उन्होंने जीवन के लिए जो नियम बताए उनको उपस्तम्भ कहा। ''**त्रय उपस्तम्भा शरीरस्य आहारो निद्रा ब्रह्मचर्यम् इति**'' अर्थात् भोजन है, विश्राम है, संयम है-यह हमारे जीवन के तीन आधार हैं, पर प्राथमिक नहीं हैं। ये द्वितीय श्रेणी के हैं। प्राथमिक आधार तो जन्म, जीवन व मृत्यु हैं। यह हमारी सीमा में नहीं हैं, हमारे हाथ में नहीं हैं। इसलिए यहाँ इनको उपस्तम्भ कहा है। ये दूसरे स्थान पर हैं। जन्म परमेश्वर देता है, जीवन परमेश्वर बनाके रखता है। आत्मा व शरीर का वियोग मृत्यु के रूप में हमारे सामने होता है, वो भी परमेश्वर की व्यवस्था से होता है। इसलिए प्रथम स्तम्भ परमेश्वर के आधीन है। उसके बाद इसको बनाकर, संभालकर रखने का काम मनुष्य का है, इसलिए आपके हाथ में है आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य। इसकी चर्चा हम अन्यत्र करेंगे।

यहाँ इस प्रसंग को ठीक करने के लिए उन्होंने कहा कि तीन चीजें मनुष्य करता है-**प्राणैषणा**-वो प्राण को बचाता है, जीवन को बचाता है और उस जीवन को बनाकर रखने के लिए धन की आवश्यकता है, इसलिये ''**प्राणेभ्यो ह्यनन्तरं धनैषणा**''-प्राण के बाद जो दूसरी इच्छा है जीने की, यही सबसे बलवान है क्यों? '**धनमेव परियष्टव्यं भवति**'-जीवन को चलाने के लिए साधनों का संग्रह करना पड़ता है, साधनों की खोज करनी पड़ती है तो उसको धनैषणा कहें, वित्तैषणा कहें और जो तीसरी चीज है वो परलोकैषणा। यहाँ से जाना नहीं चाहते, किन्तु जब हम जाते हैं तो हमारे मन में अच्छे स्थान पर जाने की इच्छा रहती है। अच्छे स्थान पर जाने की इच्छा हमारे यहाँ स्वर्ग की कामना है, मुक्ति की कामना है, परलोक की कामना है। बहुत सारे इसके नाम हैं, बैकुण्ठ है, क्षीरसागर है, सिद्धशिला है, मोक्ष है। उस अच्छे स्थान पर जाने की इच्छा परलोकैषणा है।

इस क्रम में एक बात हमारे समझने की है कि पूरे चक्र का आधा हमारे दृष्टिगत होता है और आधा नहीं होता। जो व्यक्त है, अभिव्यक्त है, वो तो हमारे सामने है, किन्तु जो व्यक्त नहीं है, जो सूक्ष्म है, जो दिखाई नहीं दे रहा है उसके बारे में हम कुछ नहीं जानते, उसके बारे में हमें कुछ भी पता नहीं है। जन्म से पहले हम कहाँ से आ रहे हैं, जीवन में यहाँ हैं और जीवन के बाद मृत्यु से हम कहाँ जायेंगे, इसका हमें पता नहीं है। लेकिन एक सच है-सूर्य उदय हो रहा है, सूर्य उदय हो चुका है, दिनभर सूर्य विद्यमान है और सांयकाल सूर्य अस्त हो गया। इतना होने के पश्चात् क्रिया समाप्त नहीं हो जाती। हम यह मानकर नहीं बैठते कि अब आगे कुछ नहीं होने वाला। हमको तो नितान्त विश्वास होता है, पक्का भरोसा होता है कि यह प्रक्रिया फिर दोहराई जाएगी और फिर कोई समय आएगा जब सूर्योदय होगा। सूर्य का प्रकाश विद्यमान रहेगा और सूर्य अस्त भी होगा। तो यह जो चक्र है, यह ऐसा चल रहा है कि पूर्व से पश्चिम में चल रहा है और हर बार वह पूर्व से पश्चिम में ही चलता है तो यह कहना कि रोज नया सूरज उगता है, परमेश्वर नया बनाता है यह तो संभव नहीं है। वह सूरज हमारे सामने पश्चिम से यदि वापस पूर्व की ओर चला जाता और पूर्व से फिर पश्चिम में आता रहता तो हमें कोई सन्देह नहीं होता कि यही सूरज है जो इधर से उधर जाता है और उधर से इधर आता है। ऐसा होने में बाकी तो कुछ नुकसान नहीं था, पर दिन की परिस्थिति कभी रात में नहीं बदल पाती। सायंकाल होता, तब भी दिन आ जाता, प्रातः काल सवेरा हो जाता, तब भी दिन आ जाता। सवेरा और शाम, प्रातःकाल और सायंकाल होने पर दिन कभी नहीं हटता। फिर वह सायंकाल नहीं होता। पश्चिम से यदि सूर्य चलता तो जो सूरज की दिशा फिर भी पूर्व ही होती। पूर्व से पश्चिम या पश्चिम से पूर्व एक ही दिशा में आना जाना होता है, वह दिशा निश्चित है, नहीं तो दिशा अनिश्चित हो जाएगी। तो जहाँ से आ रहा है और जिधर जा रहा है उसे हम लोक व्यवहार में-जहाँ से आ रहा है उसे पूर्व दिशा कहते हैं और जहाँ जा रहा है, उसे पश्चिम दिशा कहते हैं। हर बार जाना और हर बार फिर वहीं जाना, इससे यह बात प्रकट होती है कि हम जो जानते हैं, वह चक्र अधूरा है।

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

ईश्वर की रचना विशेष- एक स्वाध्याय प्रेमी वेदभक्त ने चलभाष पर पूछा है कि महर्षि दयानन्द ने ईश्वर की 'रचना विशेष' का उल्लेख किया है। परमात्मा की रचना विशेष कौनसी है और सामान्य रचना क्या है? उन्हें बताया गया कि एक बार मैंने ऋषि उद्यान के दैनिक सत्संग में इसी विषय पर प्रवचन देते हुये कहा था कि ईश्वर की सकल सृष्टि, सम्पूर्ण जगत् ही रचना विशेष है। कैसे? संसार में करोड़ों मनुष्य हैं। सबकी आवाज न्यारी-न्यारी है। परमात्मा ने सबको न्यारे-न्यारे गले दिये हैं। सबकी न्यारी-न्यारी नाक है। अंधेरे में आवाज सुनकर हम पहचान जाते हैं कि अमुक बोल रहा है। मनुष्यों में बड़े-बड़े कलाकार कारीगर हैं। मनुष्य की लिखाई, सहस्त्रों व लाखों पृष्ठ सब एक से, सब चित्रकारी एकसी, सब सिलाई-बुनाई एक सी, सब मनुष्यों की आकृतियाँ एक सी। प्रभु की रचना विशेष है या नहीं?

प्रभु पूजनीय- एक प्रश्न पूछा गया कि प्रभु को पूजनीय कहना क्या सिद्धान्त-विरुद्ध नहीं? न जाने पूजनीय शब्द पर उन्हें क्या शंका किसी ने पैदा कर दी। ऋषि जी ने सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में स्पष्ट लिखा है, ''परमात्मा जिसलिये न्याय चाहता करता, अन्याय कभी नहीं करता, इसीलिये वह पूजनीय और बड़ा है।...इसी प्रकार बिना कारण के करने से ईश्वर को दोष लगे।'' यह अन्तिम वाक्य एकदम वैज्ञानिक चिन्तन है। यह वैदिक मान्यता है। अन्य मतों में बिना कारण के करने का दोष ही तो उनके परमात्मा व अवतारों, पैग़म्बरों की महिमा का प्रमाण है।

जब विद्यार्थी था तब पौराणिकों के एक सत्संग में एक कीर्तन सुना। भक्त लोग बड़े जोश से गा रहे थे-

''जो बिगड़े सो तेरा नाथ मेरा क्या बिगड़े।''

मुझे ६८ वर्ष पूर्व भी आर्यसमाज से प्राप्त संस्कारों के कारण कीर्तन की यह टेक चुभ गई। सोचा कि करे मनुष्य और उसका कुछ भी न बिगड़े। जो बिगड़े सो नाथ का या भगवान् का बिगड़े। बिना कारण के दोष लगे, यह कहाँ का न्याय। ऐसा ईश्वर न पूजनीय है और न बड़ा है। वह स्वभाव से न्यायकारी होने से पूजनीय है।

श्री डॉ. अम्बेडकर ने लिखा है- राजस्थान से ऋषिभक्त देशभक्त स्वामी कृष्णानन्द जी ने डॉ. अम्बेडकर के विषय में मेरे एक लेख के प्रसंग में एक प्रश्न पूछा तो उन्हें बताया कि श्रीयुत् **डॉ. अम्बेडकर ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवनकाल में यह लिखा था, ''स्वामी श्रद्धानन्द जी दलितों के सबसे बड़े हितैषी हैं।''** उनसे बड़ा दलितों का हितैषी वह किसी को नहीं मानते थे। यह वाक्य सुनकर वह आनन्दित हुये। इसका प्रमाण पूछा। उन्हें बताया कि यह पूरा लेख (अंग्रेजी में) मान्य कुशलदेव जी से मँगवाया था। अब मिल नहीं रहा। आप मराठवाड़ा विद्यापीठ से मँगवा लें। डॉ. अम्बेडकर के समग्र साहित्य में बड़ी सरलता से मिल जावेगा। आर्यपत्रों में स्वामी जी के बलिदान पर लिखने वालों ने रटी-रटाई ४-५ बातें ही लिखीं। स्वामी जी के घटनापूर्ण जीवन में एक से एक बढ़कर ऐतिहासिक महत्त्व की घटना है। न जाने आचार्य रामदेव जी व मेहता जैमिनि जी के नामलेवा समाजियों का इतना दिमाग नियोजन कैसे हो गया है।

मेहता जैमिनि जी का एक शास्त्रार्थ- मान्य हरिकिशन जी आर्य विचारक की बाइबिल पर पुस्तक के प्राक्कथन में मैंने महर्षि के पश्चात् आर्यसमाज की ईसाई मत पर ५-७ मौलिक पुस्तकों का उल्लेख किया। आश्चर्य का विषय है कि अमेरिका से प्रकाशित एक दस्तावेज में भी उन्हीं पुस्तकों के नाम प्रिय राहुल जी ने खोज निकाले। केवल पं. हरनामसिंह जी लिखित पुस्तक का मेरे प्राक्कथन में उल्लेख नहीं था। अब हमारे कितने लोग पं. हरनामसिंह जी को जानते हैं।

श्री मेहता जैमिनि जी की कुछ खोज व ज्ञान अगली पीढ़ी तक पहुँचाने की योजना बनाकर कुछ कार्य हाथ में लिया है। आज भूमण्डल प्रचारक मेहता जैमिनि जी के एक अनूठे शास्त्रार्थ का एक अनूठा तर्क परोपकारी के द्वारा आर्यमात्र तक पहुँचाता हूँ। ईसाई मान्यता है कि सृष्टि की

उत्पत्ति से पूर्व केवल परमात्मा था। महर्षि दयानन्द जी ने पहली बार ईसाई मत को चुनौती दी कि यह कहना मिथ्या कथन है कि परमात्मा के अतिरिक्त किसी की भी सत्ता नहीं थी। बाइबिल का आरम्भ करते हुये कहा गया है, ''and the spirit of God was hovering over the waters.'' ऋषिवर ने चुनौती दे दी कि परमात्मा का आत्मा जलों पर डोल रहा था। ईश्वर के साथ जल भी तो था। ऋषि के पश्चात् पं. लेखराम जी के क्रिश्चियन मत दर्पण ने रही सही कमी पूरी करके नये-नये प्रश्न खड़े कर दिये।

एक शास्त्रार्थ में तो मेहता जैमिनि जी ने एक सर्वथा अनूठा व मौलिक तर्क देकर पादरियों को चौंका दिया। परमात्मा का आत्मा जलों पर था। हाईड्रोजन तथा ऑक्सीजन H_2O के बिना परमात्मा ने जल बनाये भी तो कैसे? इससे सिद्ध है कि जलों से पूर्व भी भगवान् अकेला न था। हाईड्रोजन व ऑक्सीजन की सत्ता थी। मेहता जी के तर्क ने बाइबिल की या ईसाई मत की नींव ही हिलाकर रख दी। न जाने आर्यसमाज मेहता जी का यह प्रबल तर्क कैसे भूल गया? विदेशी पुस्तकों व अंग्रेजी साहित्यकारों-गोरे लोगों के प्रमाण देने की हीन भावना से ग्रस्त भारतीय लेखक तथा वक्ता अपने बड़े से बड़े विद्वानों को उद्धृत करते हुये घबराते व कतराते हैं। यह विनाशकारी रोग आर्यसमाज के भी स्वयंभू कथित स्कॉलरों को खा रहा है। अब मेहता जी के इस तर्क की हमें धूम मचानी चाहिये।

'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' ग्रन्थ- 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' ग्रन्थ इस समय प्रकाशनाधीन है। इसके छपने पर गुणी विद्वान् इसकी समीक्षा करके इसके गुण-दोष बतायेंगे। अत्यन्त विनम्रता से महाराज के संन्यास-दीक्षा शताब्दी वर्ष में इसके लेखक के नाते, समाज का एक तुच्छ सेवक होने के नाते मैं भी आर्य जनता, विशेष रूप से युवा पीढ़ी की सेवा में स्वामी जी महाराज के जीवन-देन व उपलब्धियों पर अब तक सबसे बड़े ग्रन्थ के विषय में कुछ कहने का साहस करता हूँ।

इस लेखक ने स्वामीजी महाराज के जीवन पर जितने दस्तावेजों-स्रोतों का लाभ उठाया है, उद्धृत किया है, उतने स्रोतों का आज तक किसी अन्य लेखक को लाभ नहीं मिला। देश-विदेश से प्राप्त सर्वथा अप्राप्य दस्तावेजों के पहली बार किसी ग्रन्थ में चित्र मिलेंगे यथा Revold in India Feared तथा 'गोराशाही की करतूत' लेख।

स्वामीजी का जीवन लिखते हुये पहली बार किसी लेखक ने 'सद्धर्म प्रचारक' के लगभग पन्द्रह सहस्र पृष्ठों को खंगालकर एक सहस्र से कहीं अधिक घटनाओं (जिन्हें हम भूल चुके थे) की नये सिरे से खोज करके दी है। इन तक किसी की पहुँच ही नहीं थी। प्रकाश, आर्य दर्पण, आर्य समाचार, प्रताप, ट्रिब्यून, सार्वदेशिक मासिक, पतितोद्धार, देशहितैषी, तेज, आर्य गजट, Times of India, लीडर प्रयाग आदि बीसियों पत्रों का लाभ आर्य जाति को पहुँचाया है। विरोधियों के सहस्रों अंकों व सैंकड़ों पुस्तकों को देख-पढ़कर एक-एक घटना का प्रमाण दिया है।

लेखक ने स्वामी जी की संन्यास दीक्षा में सम्मिलित सबसे छोटे बालक (जिसका चित्र उस समय के ग्रुप फोटो में है)का भी साक्षात्कार लिया। स्वामी जी के साथ कार्य करने वाले उनके सहयोगियों व अनेक शिष्यों से मिलकर जो संस्मरण लेता रहा, उनका पूरा-पूरा लाभ पाठकों को पहुँचाया है।

स्वामी जी महाराज पर जिस किसी ने मिथ्या दोष लगाया या भ्रामक सुनी सुनाई तथ्यहीन कोई बात लिख दी, उन सबका पहली बार इसी ग्रन्थ में मुँहतोड़ सप्रमाण उत्तर हमारे पाठक पढ़ेंगे। प्रिं. श्रीराम शर्मा ने कभी यह गप्प उड़ाई थी कि स्वामी जी ने पंजाब के गोरे गवर्नर से लाला लाजपतराय के निष्कासन के समय एक शिष्टमण्डल लेकर भेंट की थी। हमने पं. श्रीराम शर्मा के जीवनकाल में ही उनकी गढ़न्त का सप्रमाण प्रतिवाद करके उनकी बोलती बन्द कर दी थी। डॉ. जे. जॉर्डन्स जी ने एक मौलाना द्वारा स्वामी जी पर सरकार से धन लेकर हिन्दू-मुसलमानों को लड़ाने का मनगढ़न्त दोष लगाया और सरकार के नाम स्वामी जी का पत्र पकड़े जाने की बेतुकी बात लिखी है। किसी ने भी इसका प्रतिवाद कभी नहीं किया। हमने पहले भी इसका खण्डन कर झुठलाया था। डॉ. जॉर्डन्स को प्रमाणस्वरूप उसी युग का एक ग्रन्थ दे दिया। इस ग्रन्थ में भी निराकरण कर दिया है।

परोपकारिणी सभा, राजस्थान आर्यसमाज के इतिहास तथा पूरे देश के आर्यसमाज के इतिहास की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओं को, जो हटावट का शिकार हो गईं, जो दबा दी गईं, जिनको विकृत कर दिया गया, उनको खोज-खोज कर दिया गया। जोधपुर में वायसराय के आने पर आर्य मन्दिर से ध्वज उतारने की सरकार की आज्ञा न मानने का स्वामी जी का निर्देश रहा। यह घटना राजस्थान में किसने मुखरित की? कर्नल प्रताप ने चुप्पी क्यों साध ली? श्री रामबिलास सारडा ने लिखा कि समय-समय पर राजस्थान के आर्यसमाज के सहयोग व बचाव में श्री स्वामी जी आये। परोपकारिणी सभा के आर्यकरण का आन्दोलन स्वामी श्रद्धानन्द जी की ही उपलब्धि है।

ऋषि दयानन्द जी का पत्र-व्यवहार परोपकारिणी सभा में सड़-गल जाता। ऋषि के पत्र-व्यवहार का व्यापक स्तर पर प्रकाशन स्वामी जी ने आरम्भ किया। यह पाठक इसी ग्रन्थ में पढ़ेंगे।

पहली बार आर्यों को बहिष्कार की अग्नि-परीक्षा महात्मा मुंशीराम जी के नेतृत्व में जालन्धर में देनी पड़ी। स्वामी जी तब लाला लाजपतराय, ला. पिण्डीदास, श्रीयुत् लालचन्द फलक, वीर अजीत सिंह और मेहता आनन्द किशोर आदि की रक्षा के लिये गोराशाही से टकराये। इस पर बड़े विस्तार से सप्रमाण प्रकाश डाला है। लाला जी के सब मित्र संगी-साथी उन्हें छोड़ गये। वीर मुंशीराम ने क्या किया, वह नये-नये प्रमाण और सामग्री इसी ग्रन्थ में पढ़ने को मिलेगी।

पटियाला राजद्रोह के अभियुक्तों की लड़ाई महात्मा मुंशीराम के नेतृत्व में लड़ी गई। धौलपुर में पत्थर वर्षा किस पर हुई? कौन आगे आया? गढ़वाल में किसका सिर काटने की घोषणा की गई? स्वामी नित्यानन्द, पं. दौलतराम, कृषकों और सैनिकों की रक्षा तथा वीरों के यज्ञोपवीत की लड़ाई स्वामी जी ने कैसे लड़ी-यह पहली बार इस जीवन चरित्र में बड़े विस्तार से प्रेरक और नवजीवन का संचार करने वाली भाषा में आप पढ़ेंगे। देह-त्याग तक स्वामी जी को सैकड़ों बार मृत्यु की, हत्या की धमकियाँ दी गईं। सिर तली पर धरकर संगीनों के सामने छाती खोलने से महाराज कभी पीछे न हटे। मौत से जूझने के सैकड़ों प्रसंग पहली बार आप पढ़ेंगे। इसी ग्रन्थ में देशवासी पहली बार बागपत (उ.प्र.) के उन दस देशभक्त बलिदानी आर्य सैनिकों की कहानी पढ़ेंगे, जिन्होंने स्वामी जी की नंगी छाती को देखकर घन्टाघर में गोली चलाने से इन्कार करके जान जोखिम में डाली। दारुण दुःख सहे।

विश्व का पहला महापुरुष महात्मा मुंशीराम था जिसने माता शिवदेवी जी (जीवन सङ्गिनी) को अपने उद्धार व महानता का श्रेय दिया। इन्हीं से प्रेरणा पाकर विश्वप्रसिद्ध पहला साहित्यकार पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय था, जिसने संसार में अपनी पत्नी की जीवन कथा लिखी। आर्यो! नारी को इतना ऊँचा और किसने उठाया?

स्वामी श्रद्धानन्द का आध्यात्मिक जीवन कितना ऊँचा था? इसका परिचय इतने विस्तार से इसी ग्रन्थ में आप पढ़ेंगे। इस ग्रन्थ के लेखन की प्रेरणा लेखक को अपने पिता श्री जीवनमल, पूज्य पं. त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री, श्रद्धेय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय व श्री महाशय कृष्ण जी से प्राप्त हुई। श्री पं. क्षितीश कुमार जी वेदालंकार ने इस करणीय कार्य को करने का लेखक से पक्का वचन लिया। अब इस ग्रन्थ के पढ़े बिना कोई भी आर्यसमाज की देन व इतिहास पर कुछ नहीं लिख सकेगा।

हांसी के आर्यसमाज का प्रश्न- 'शान्तिधर्मी' में हांसी के आर्यसमाज की स्थापना विषयक कुछ छपा है। हिसार क्षेत्र के एक सज्जन ने इस पर कई प्रश्न पूछ लिये। ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना किसी इतिहासप्रेमी के बस की बात नहीं। उस लेख में वर्णित सज्जनों व घटनाओं का उल्लेख या संकेत पुराने आर्य पत्रों में कतई नहीं, अतः जो कुछ लेखक ने लिखा उसको आँखें बन्द करके मान लो। वैसे हांसी का आर्यसमाज हिसार समाज के शीघ्र बाद स्थापित हो गया था, परन्तु तब लाला लाजपतराय जी का तो उसमें कुछ भी योगदान नहीं था। सद्धर्म प्रचारक में उस काल में छपे समाचार में शान्तिधर्मी में वर्णित किसी व्यक्ति का नाम ही नहीं। कोई जाँच करना चाहे तो उसको सद्धर्म प्रचारक की फाइल तक पहुँचाने में मैं सहयोग करूँगा। जिस व्यक्ति का स्वामी श्रद्धानन्द आदि से मेल-मिलाप बताया गया है उसकी भी चर्चा उन महापुरुषों ने कभी नहीं की। इतिहास मुँहजबानी लिखना या गढ़ना भी एक कला

है।

महर्षि दयानन्द का बोध पर्व- आर्यसमाज में भी पहले शिवरात्रि के नाम से ही ऋषि का बोध पर्व मनाया जाता था। जानते हो! इसे बोध पर्व कब से कहा जाने लगा? यह महान् विद्वान् और श्रेष्ठ जीवन के नेता डॉ. चिरंजीव जी थे, जिन्होंने पंजाब प्रतिनिधि सभा के मन्त्री के रूप में इसे ऋषि बोध पर्व नाम दिया था। ऋषि के बोध पर्व पर हम ऋषि की किस-किस देन का, उपकार का और उपदेश का विशेष ध्यान करें? १. महर्षि ने भक्त और भगवान् के बीच की दीवार ढहा दी। हमें बिचौलियों, मुक्ति के दलालों से बचा लिया। कहा कि भक्त और भगवान् का सीधा सम्बन्ध है। ईश्वर एक है। २. जीव असंख्य हैं, साथ ही प्रकृति भी अनादि है। सृष्टि जीवों के कल्याण के लिये रची गई है। इसे अपने लिये या प्रकृति के लिये नहीं रचा गया। ३. प्रभु पूर्ण है और प्रकृति भी इस दृष्टि से पूर्ण है कि उसकी कोई इच्छा नहीं। उसे न अज्ञान सताता है और न ही दु:ख होता है। प्रकृति का उपयोग जीवों के लिये होता है। इसी में उसकी सत्ता की सार्थकता है। ४. प्रभु एक है। हर कण में, हर मन में, हर जन में है। प्रभु हमारे भीतर है अत: वेद सद्ज्ञान का प्रकाश ऋषियों की हृदय गुफा में हुआ। फरिश्तों का यहाँ काम नहीं। ५. ईश्वर सर्वव्यापक होने से ही स्रष्टा, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ तथा सृष्टि का संचालक है। प्रभु हमसे दूर नहीं। हम उससे पृथक् नहीं। हम उसके साथ हैं। वह नाथ हमारे साथ है।

वर्तमान सरकार और आर्यसमाज- पग-पग वर्तमान की केन्द्र सरकार व भाजपा की प्रान्तीय सरकारें ऋषि दयानन्द की और आर्यसमाज की उपेक्षा कर रही हैं। हम लोग देशहित के प्रत्येक कार्य में इस सरकार की अच्छी नीतियों का पूरा समर्थन करते हैं। प्रधानमन्त्री को 'नीच' कहा गया तो हम आर्यों ने परोपकारी में 'नीच' कहने वाले जाति अभिमानी की धज्जियाँ उड़ा दीं। गुजरात के प्रधानमन्त्री ने नवयुग निर्माता ऋषि दयानन्द के नाम पर गुजरात में क्या किया? श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा के स्मारक में परोपकारिणी सभा के भवन का व श्री हरविलास सारडा का फोटो न देकर स्वामी विवेकानन्द का चित्र रख दिया गया। क्यों? Remote Control वाले यही चाहते हैं। विवेकानन्द जी के Statue मूर्तियाँ स्थापित हों।

राजस्थान में २५ महापुरुषों के जीवन स्कूलों में पढ़ाये जावेंगे। श्री कृष्ण सिंह बारहट, श्री केसरी सिंह और हुतात्मा प्रताप सिंह बारहट जैसे ऋषिभक्त बलिदानी परिवार, श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, हुतात्मा महात्मा गोपालदास जी बीकानेर (चुरु कहिये) के पूज्य प्रेरणास्रोत ऋषि की जीवनी इन २५ में नहीं। जिन आधुनिक महापुरुषों को सरकार ने चुना है उनके पत्र-व्यवहार में एक भी क्रान्तिकारी का पत्र नहीं। देशभक्ति का प्रमाण अब सरकार का चलता है। यह ठीक है, परन्तु दलितोद्धार के लिये, देश की अखण्डता के लिये वीर बिस्मिल, रोशन सिंह, भक्त सिंह, लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द, श्याम भाई, माता गोदावरी, कृष्ण सिंह, काशीनाथ जैसे हुतात्मा देश को किसने दिये? देशहित हुतात्मा देने वाला और कौन संन्यासी हुआ है?

सरकार ने जो करना है सो करे। आर्यसमाज को गिड़गिड़ाकर कुछ माँगना नहीं चाहिये। आर्यो! अपना एक-एक श्वास ऋषि-मिशन के लिये दो। अपना लहू देकर अपने इतिहास की रक्षा करो। भिखारी बनकर सरकार से कुछ न माँगो। सब सरकारें देख लीं। इन्हें भी देख लिया। उड़ीसा के जगन्नाथपुरी के मन्दिर से निकलते हुए सरल हृदय पं. दीनदयाल उपाध्याय ने तब पत्रकारों के प्रश्न के उत्तर में कहा था, ''जब मैंने मन्दिर में प्रवेश किया था तब मैं कट्टर सनातनधर्मी था और जब बाहर निकला तो अब मैं कट्टर आर्यसमाजी हूँ।'' मूर्तिपूजको! अनेक भगवानों की, हर कंकर की पूजा करने वालो! आपने तो पं. दीनदयाल की भावनाओं को भी रौंद डाला। आपने तो वीर सावरकर, शिवा, प्रताप की रट लगाते-लगाते स्वामी विवेकानन्द जी को ही सब कुछ मान लिया।

मनुष्यों को चाहिये कि पुरुषार्थ से विद्या का सम्पादन, विधिपूर्वक अन्न और जल का सेवन, शरीरों को नीरोग और मन को धर्म में निवेश करके सदा सुख की उन्नति करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.१४

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२**

ऐतिहासिक कलम....

यज्ञ की दक्षिणा

पं. वीरसेन वेदश्रमी

जब 'टंकारा समाचार' और 'परोपकारी' साथ ही छपता था, तब पं. युधिष्ठिर मीमांसक इसके सम्पादक थे। उस समय के सिद्धान्त अंक (१९६३) में छपे इस लेख के ऊपर मीमांसक जी के हाथ से लिखा है- 'इस फार्म के ५० प्रतियाँ अधिक छपवाई जायें।' इस वाक्य से स्पष्ट होता है कि मीमांसक जी वेद के अध्येताओं के सम्मान आदि पर कितना बल देते थे। वर्तमान में एक तो वेद कोई पढ़ता ही नहीं और यदि पढ़ता भी है तो उसका यथोचित सम्मान न होकर सामान्य कथावाचकों में ही सबकी रुचि रहती है। फलस्वरूप आर्यसमाज में वेद के अध्ययन में अनिच्छा बढ़ती जा रही है। वेद का प्रचार हो, प्रसार हो, इसके लिये वेद के अध्येताओं का भी यथोचित सम्मान होना आवश्यक है। यही इस लेख का अभिप्राय है। लेख का परिचय स्वयं मीमांसक जी के ही शब्दों में दिया जा रहा है। -**सम्पादक**

[श्री पं. वीरसेन जी आर्यसमाज में उन दो तीन व्यक्तियों में हैं जिन्होंने वेद के सस्वर पाठ के अभ्यास के लिये वर्षों समय लगाया है। इसके साथ ही आप का वेद का स्वाध्याय भी गम्भीर है। वैदिक कर्मकाण्ड में आपकी विशेष आस्था है। आप सम्पूर्ण संस्कार संस्कारविधि की पुस्तक हाथ में बिना लिये कराते हैं। इसका पौराणिक विद्वानों पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है। यह मैंने विशेष रूप से अनुभव किया है।

आर्यसमाज में श्रद्धा की न्यूनता के कारण ऋत्विजों को दक्षिणा देने में प्रायः अनास्था और कृपणता देखने में आती है। उसका फल यह हो रहा है कि अधिकारी विद्वान् इस कार्य से दूर हो रहे हैं। विद्वान् लेखक ने दक्षिणा की महत्ता पर इस लेख में अच्छा प्रकाश डाला है। -**पं. युधिष्ठिर मीमांसक**]

दक्षिणा का महत्त्व- यज्ञ और दक्षिणा का परस्पर अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। जितना महत्त्व यज्ञ का है, उतना ही दक्षिणा का महत्त्व है। दक्षिणा से ही यज्ञ को महत्त्व प्राप्त होता है और यज्ञ के बिना दक्षिणा की भी कोई प्रतिष्ठा नहीं। यज्ञ के अतिरिक्त कर्म के लिये दिये जाने वाले द्रव्य की दक्षिणा संज्ञा भी नहीं होती। यज्ञ कराने के निमित्त दिये गये धन को जो बड़ी श्रद्धा एवं आदर से दिया जाता है, वही दक्षिणा नाम को सार्थक करता है। परमात्मा की प्रीति प्राप्त करने, आत्मोन्नति तथा समस्त विश्व के कल्याण के लिये यज्ञ होता है। उस यज्ञ का प्रारम्भ ईश्वर की स्तुति, प्रार्थनोपासना, स्वस्ति एवं शान्ति के मन्त्रों के उच्चारण के अनन्तर ऋत्विग्वरणपूर्वक अग्न्याधानादि कर्म करके अखिल ब्रह्माण्ड के दैवत तत्त्व की शुद्धि एवं पुष्टि की जाती है और उस यज्ञ का अन्त दक्षिणा की क्रिया से होता है।

दक्षिणा से यज्ञ की सफलता- आदि और अन्त के ऋत्विग्वरण एवं दक्षिणा प्रदान-इन्हीं दो कर्मों से यज्ञ की सफलता एवं यजमान को फल-प्राप्ति होती है अन्यथा नहीं। इसीलिये शास्त्रकारों ने दक्षिणारहित यज्ञ को नष्ट हुआ यज्ञ माना है।

''घ्नन्ति वा एतद्यज्ञम्'' ''एष यज्ञो हतो न दक्षते'' इत्यादि शतपथ के वाक्य दक्षिणा की महती आवश्यकता को प्रकट कर रहे हैं। इस नष्टता का तात्पर्य यजमान के फल-प्राप्ति विशेष से ही सम्बन्धित है, सर्व-सामान्य के फल के नाश से नहीं। अतः सभी यज्ञों में दक्षिणादि की नितान्त आवश्यकता है, परन्तु जो यज्ञ व्यक्तिगत लाभ-प्राप्ति के लिए किये जाते हैं अथवा संस्कारादि यज्ञ कर्म हैं, उनमें तो दक्षिणा देना और भी अधिक आवश्यक है।

यज्ञपत्नी दक्षिणा- यजुर्वेद के १८ वें अध्याय में राष्ट्रभृत् होम के मन्त्रों में यज्ञ और दक्षिणा के परस्पर गूढ़, प्रेममय, फलप्रद एवं अभिन्न सम्बन्ध को समझाने के लिये अलंकार रूप में वर्णन किया है। परमात्मा के अखिल विश्व या ब्रह्माण्डरूपी राष्ट्र के भरण एवं पोषण करने में यज्ञ और दक्षिणा का भी प्रमुख भाग होने से इसको राष्ट्रभृत् मत्रों में ग्रथित किया है। मन्त्र में-

भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणा अप्सरसस्तावा नाम। स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु

इस मन्त्र में यज्ञ को गन्धर्व एवं दक्षिणा को अप्सरा का रूप दिया है। यज्ञ पुरुष है तो दक्षिणा उसकी पत्नी रूप है। जिस प्रकार पति-पत्नी के दाम्पत्यरूप एकत्व से सृष्टि का प्रवाह चलता रहता है और पोषण भी होता रहता है, उसी प्रकार यज्ञ एवं दक्षिणा के दाम्पत्यरूप एकत्व सम्बन्ध से वेद का सतत प्रवाह चलता रहता है और वेद का पोषण होता रहता है। यदि पुरुष कितना ही हृष्ट-पुष्ट एवं सुन्दर हो और वह पत्नीविहीन हो तो वह सृष्टि-प्रवाह चलाने में या सन्तानोत्पत्ति में निष्फल होता है। इसी प्रकार बहुत व्यय से, उत्तम प्रकार से रचाये तथा श्रद्धापूर्वक किये गये यज्ञ की सफलता तब तक नहीं हो पाती, जब तक दक्षिणा का साहचर्य न हो।

प्रशंसनीय दक्षिणा देवें- यदि पुरुष हृष्ट-पुष्ट हो और पत्नी रोगी, दुर्बल एवं अप्रसन्न हो तो भी फल-प्राप्ति संभव नहीं। यदि कदाचित् फल की आशा भी हो तो फल-प्राप्ति का अवसर आने पर वह नष्ट हो जाता है या दाम्पत्य जीवन ही नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार बहुत व्ययसाध्य उत्तम यज्ञों में यदि दक्षिणा की स्थिति क्षीण, दुर्बल, दरिद्र तथा खेदजनक हो तो उससे फल-प्राप्ति संभव नहीं। इसीलिये वेद में यज्ञ की अप्सरा का नाम 'स्तावा' बताया है अर्थात् यज्ञ की दक्षिणा 'स्तावा'=स्तुतियोग्य, प्रशंसायोग्य हो। प्रशंसा स्वयं के द्वारा की हुई निरर्थक है। ऋत्विजों और यज्ञ में आगत महानुभावों द्वारा जो प्रशंसनीय हो, वही 'स्तावा' नाम को सार्थक करने वाली होगी। यही स्तावारूपी, प्रशंसारूपी दक्षिणा यजमान के यश का विस्तार देश-देशान्तर में तथा युग-युगान्तर में भी करती हुई सबके आशीर्वादरूपी प्रशंसारूप वचनों से यजमान के लिये चारों ओर से सुख-समृद्धि का कारण बनती रहती है।

यज्ञ के अनुरूप दक्षिणा देवें- दक्षिणा प्राप्त ऋत्विजादि एवं उपस्थित विद्वान् यजमान की कीर्ति का विस्तार उतने ही सामर्थ्य से करते हैं जितनी सामर्थ्य से यजमान दक्षिणा को 'स्तावा'=प्रशंसा योग्य बनाता है। **शतपथ** में दक्षिणा देने के बारे में विवेचन करते हुये लिखा है-

यावानेव यज्ञो यावत्यस्य मात्रा तावतीभिर्द्दक्षिणाभिर्दक्षयति-एषा मात्रा दक्षिणानां दद्यात्

अर्थात् जितना बड़ा यज्ञ हो, जिस मात्रा से किया जावे, उतनी ही बड़ी मात्रा की दक्षिणा से वृद्धि को प्राप्त होता है- इस प्रमाण से दक्षिणा देवें।

गौ दक्षिणा- प्राय: दक्षिणा के बारे में गृह्यसूत्रों में संस्कारादि की दक्षिणा कम से कम १ गौ की नियत की है। शतपथ में भी-"**तस्यै धेनुर्दक्षिणा**"-धेनु दक्षिणा में देने को बताई है। प्राचीन समय से धेनु ही हमारी अर्थव्यवस्था का आधार रही है। यज्ञ के साथ तो धेनु का और भी सम्बन्ध है। यजमान के लिये यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में-"**अस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वी:**" इस गौ-पति यजमान के पास बहुत सी गौएं हों-यह प्रार्थना की है। जिस प्रकार यज्ञ के द्वारा सर्वकामनाओं का दोहन होता है, उसी प्रकार हमारे जीवन की धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की साधनाओं की आश्रयभूत पूरक कामनाओं का दोहन/प्राप्ति, धेनु/गौ के द्वारा होती है। अत: दक्षिणा की प्रधान इकाई गौ को ही नियत किया गया और इसकी अपेक्षा से दक्षिणा की मात्रा बढ़ाई गई। शतपथ में-"**ता वै षड्दद्यात्-द्वादश दद्यात्-चतुर्विंशतिर्दद्यात्**" कहकर ६,१२ एवं २४ संख्या दक्षिणा में देने का विधान किया है। इतनी दक्षिणा देने का महत्त्व प्राचीन ऋषियों ने समझा था। इसका प्रधान कारण यह भी था कि दक्षिणा की समुचित मात्रा के बिना यज्ञ का जो पश्चात्परिणाम आधिदैविक और आध्यात्मिक क्षेत्र से प्राप्त होता है, वह यजमान को प्राप्त नहीं होता और हानि भी हो सकती है।

दक्षिणा से मनुष्य देवों की तृप्ति- जो लोग यह समझते हैं कि अग्नि में आहुति की सम्पूर्णता से ही यज्ञ पूर्ण हो जाता है और दक्षिणा की आवश्यकता नहीं, वे-"**घ्नन्ति वा एतद्यज्ञम्**"-(शतपथ)के अनुसार यज्ञ को निस्सन्देह नष्ट ही करते हैं, क्योंकि-

आहुतिभिरेव देवान्प्रीणाति दक्षिणाभिर्मनुष्यदेवान्

यह सिद्धान्त महर्षि याज्ञवल्क्य ने यज्ञ के लिये स्थिर किया है अर्थात् आहुति से तो देवता प्रसन्न होते हैं ओर दक्षिणा से वेदज्ञ विद्वान् देव तृप्त होते हैं। इस प्रकार जब दोनों प्रकार के देव प्रसन्न होते हैं तो यजमान को सुनिश्चित, निर्धारित फल की प्राप्ति होती है।

क्या दक्षिणा लेना बुरा है- आजकल जन-समाज में दक्षिणा देने की प्रणाली की बहुत उपेक्षा है। कुछ लोग

तो ऐसे भी हैं जो यह भी बड़े बुरे भाव से कहते हैं कि अमुक तो दक्षिणा लेते हैं। मानो यज्ञ की दक्षिणा लेना बड़ा भारी दोष है, परन्तु संस्कारविधि में महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने-''**प्रतिग्रहः प्रत्यवरः**''-इस मनु वाक्य का अर्थ करते हुये व्यक्तिगत कार्य के लिये दान लेने को निन्दित लिखा है और यज्ञादि कराकर दक्षिणा लेने को श्रेष्ठ लिखा है तथा संस्कारों के अन्त में भी दक्षिणा देने का विधान किया है। जब यज्ञ श्रेष्ठ कर्म है और दक्षिणा उसी का प्रमुख अङ्ग है तो वह भी श्रेष्ठ ही है। यदि दक्षिणा लेना दोष होता तो उसको विद्वान् देवों को देने का विधान शास्त्र भी क्यों करते? यदि विधान करते तो मूर्खों को देने का विधान करते या अपंगों या अपाहिजों को ही देने के लिये लिखते। अतः दक्षिणा लेना श्रेष्ठ ही है।

दक्षिणा छिपा कर न दें- वेद में दक्षिणा को यज्ञ की पत्नी का रूप दिया गया है और उसका नाम 'स्तावा'=प्रशंसायोग्य लिखा। यदि वह अग्राह्य होती तो उसका नाम 'स्तावा' नहीं होता, अपितु 'निन्द्य' ही होता। अतः दक्षिणा लेना और देना श्रेष्ठ कर्म ही है। बहुत से यजमान आजकल दक्षिणा को लिफाफे में बन्द करके देते हैं, जिससे किसी को मालूम न पड़े कि क्या दिया है। जब तक यज्ञ की दक्षिणा प्रकट रूप में, अच्छी प्रकार सत्कार से, सबके सामने नहीं दी जावेगी तो उसकी प्रशंसा भी नहीं होगी। 'स्तावा' नाम सार्थक नहीं होगा। अतः गुप्त रूप से दक्षिणा नहीं देना चाहिये। दक्षिणा छिपाने की वस्तु नहीं है, दान है। परन्तु आजकल दक्षिणा को गुप्त रूप में देकर अपनी कृपणता को छिपा लेते हैं और दान की राशि की खूब पब्लिसिटी करते हैं। वह दान, दान नहीं जिसके द्वारा अपनी पब्लिसिटी कराई जाती है। वह तो अपनी पब्लिसिटी पर व्यय किया गया धन हुआ। दान वास्तव में नहीं हुआ।

क्या दक्षिणा अग्राह्य है?- यज्ञ श्रेष्ठ कर्म है तो यज्ञांग-दक्षिणा भी श्रेष्ठ कर्म है। कुछ लोग कहते हैं कि यज्ञ में दक्षिणा न लेना भी त्याग है। ऐसे त्याग का ढोंग रचने वाले शास्त्राज्ञा का उल्लंघन तो करते ही हैं और चतुर्विध पुरुषार्थ में से एक अंग-'अर्थ' का लोप करके अधर्म का प्रचार करते हैं। ऐसा त्यागवाद वेद प्रचार के लिये और वेद की रक्षा के लिये हानिकारक ही है।

क्या दक्षिणा में द्रव्य न हो? -कुछ लोग कहते हैं कि यज्ञ में दक्षिणा लेनी चाहिये, परन्तु वह दक्षिणा भौतिक या द्रव्यमयी नहीं होनी चाहिये। यजमान के दुर्गुणों को ऋत्विज ब्रह्मादि उनसे माँगकर उनका त्याग कराकर बुराई को तो लेना और यजमान में व्रतादि की स्थापना करा देना ही साधु सन्तों के लिये महान् दक्षिणारूप उपकार कर्म है। इसमें जहाँ तक बुराइयों के त्याग एवं व्रतानुष्ठान रूप आचरण की ओर यजमान की प्रवृत्ति करना है वह तो ठीक है, परन्तु उसे दक्षिणा का रूप देना ऋषि महर्षियों के तथा वेद के सिद्धान्त के प्रतिकूल है।

दक्षिणा से वेद की रक्षा- धर्म और अर्थ का साहचर्य रहना चाहिये। धर्म से अर्थोपार्जन करना श्रेष्ठ है तो धार्मिक कार्यों से भी अर्थोपार्जित करना श्रेष्ठ है। यदि धर्म एवं धार्मिक कार्यों से अर्थोपार्जन को हेय या उपेक्षित कर दिया जावे तो फिर अधर्म से अर्थोपार्जन की प्रवृत्ति बढ़ती है। उस अवस्था में अधर्म से अज्ञान एवं असत् कर्मों का प्रवाह चलने लगता है। हमारे ऋत्विज्, पुरोहित, आचार्यों को यदि हम यज्ञ में अच्छी दक्षिणा नहीं देंगे तो यज्ञ-यागादि कर्मों का लोप भी हो जावेगा और उन पुरोहितों को अर्थोपार्जन के लिये किसी न किसी वृत्ति को अपनाना पड़ेगा। यदि यज्ञ-यागादि बहुत मात्रा में होंगे और उनमें हमारे पुरोहितों को अच्छी दक्षिणा मिलती रहेगी तो वे वेद के ही स्वाध्याय में दिन-रात लगे रहेंगे और उनकी सन्तान भी वेद के अध्ययन-अध्यापन में लगी रहेगी। अन्यथा वेद की परम्परा लुप्त हो जावेगी। अतः दक्षिणा देने में अर्थ की उपेक्षा किसी प्रकार भी नहीं करनी चाहिये। वेद की रक्षा एवं प्रचार के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है।

महर्षि दयानन्द जी का आदेश- दक्षिणा के बारे में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने संस्कारविधि में प्राचीन शास्त्रों के आधार पर बहुत कुछ लिखा है। उनके दिये हुये उद्धरण ध्यान देने योग्य हैं। यज्ञ पात्रों के लक्षण प्रकरण में उन्होंने लिखा है कि-

ऋत्विग्वरणार्थं कुण्डलांगुलीयकवासांसि

अर्थात् यज्ञ के प्रारम्भ में जब ऋत्विजों का वरण किया जावे तो उनको वरण के साथ सुवर्ण का कुण्डल, अंगूठी और उत्तम वस्त्र देकर वरण करे। इसके पश्चात्

अग्न्याधान की दक्षिणा के बारे में लिखा है कि-

अग्न्याधेय दक्षिणार्थं चतुर्विंशतिपक्षे एकोनपंचाशद् गावः, द्वादशपक्षे पंचविंशतिः, षट्पक्षे त्रयोदश, सर्वेषु पक्षेषु आदित्ये अष्टौ धेनवः। वरार्थं चतस्त्रो गावः।

अर्थात् अग्न्याधान के लिये ४९,२५,१३ या ८ धेनु दक्षिणा में देनी चाहिये। यहाँ पर आठ धेनु (गौएं) न्यून से न्यून अग्न्याधान की दक्षिणा देनी चाहिये, ऐसा मत व्यक्त किया है। जहाँ गौ के प्रमाण या मात्रा से दक्षिणा देने का विधान है वहाँ वर के प्रमाण से भी दक्षिणा देने का विधान है। अमुक कर्म की दक्षिणा १ वर या २ वर आदि देवे ऐसा विधान शास्त्रों में लिखा है। वर से तात्पर्य ४ गौवों का ग्रहण करना चाहिये। अर्थात् किन्हीं कर्मों में न्यून से न्यून एक वर भी दक्षिणा मानने पर ४ गौ न्यून से न्यून दक्षिणा भी होती है। गौ शब्द से तात्पर्य प्रथम प्रसूता सवत्सा गौ से होता है।

दक्षिणा से वेद में प्रवृत्ति- यदि ऋत्विग्वरण के बाद अग्न्याधान या यज्ञ के सम्पूर्ण कर्म के अन्त की दक्षिणा इसे मान लें और इतनी या इससे आधी या चौथाई भी दक्षिणा समाज के विद्वानों को प्राप्त होने लगे तो उनको वेद के अतिरिक्त अन्य किसी व्यवसाय में लगना ही न पड़ेगा और प्रत्येक अपना वेदानुसन्धान कार्य स्वतन्त्र रूप से प्रसन्नता से चला सकेंगे। धेनु का प्रतिनिधि रूप द्रव्य भी माना जाता है। अतः कम से कम सद्यः प्रसूता गौओं का जो मूल्य होता हो, उतना ऋत्विजों को दक्षिणा में देना भी प्राचीन ऋषियों को अभीष्ट था।

दक्षिणा कैसे दें- दक्षिणादि देने की क्रिया किस प्रकार से करनी चाहिये, इस पर भी ध्यान देना आवश्यक है। निरादर भाव से, उपेक्षित रूप से, अभिमान से या ऋत्विजों पर हम बड़ी कृपा कर रहे हैं इत्यादि प्रकार से दक्षिणा नहीं देना चाहिये, अपितु ऋत्विजों ने हमारे प्रति बड़ी कृपा की है और इनकी कृपा से, परमात्मा की कृपा एवं प्रसाद प्राप्त होगा तथा यज्ञ की सफलता होगी, ऐसे पूजनीय एवं श्रद्धायुक्त भाव से, बड़े विनम्र होकर दक्षिणा देनी चाहिये। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने इसके लिये- ''उत्तम प्रकार से यथासामर्थ्य'' देने का लिखा है। उत्तम प्रकार वही है जिसका ऊपर उल्लेख किया है और यथा सामर्थ्य का तात्पर्य न्यून से न्यून दक्षिणा से लेकर जो अधिक से अधिक देने की सामर्थ्य हो वह दक्षिणा में देना योग्य है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती देने की वस्तुओं में-''आसन, अन्न, (फलादि) जल (विविध पेय), वस्त्र, पात्र एवं धनादि का उल्लेख करते हैं। अतः सामर्थ्य शब्द से इन्हीं का न्यूनाधिक परिमाण ग्रहण किया जाना चाहिये।''

दक्षिणा के बाद क्या हो?- दक्षिणा देने के पश्चात् ऋत्विजों को प्रथम भोजन कराना चाहिये। आजकल ऋत्विजों के भोजनादि के लिये तो कोई पूछताछ नहीं है। स्वयं के भोजन एवं अपने इष्ट मित्रों के चाय, नाश्ता या भोजनादि की व्यवस्था करते हैं, ऋत्विज भूखे रहें, इसकी चिन्ता नहीं रहती है, परन्तु महर्षि स्वामी दयानन्द जी लिखते हैं कि-हुतशेष घृतभाग मोहन भोग (यज्ञशेष) को यजमान एवं यजमान पत्नी को ग्रहण करना चाहिये, परन्तु उससे भी पूर्व ऋत्विजों को यज्ञ की दक्षिणा देकर पुनः भोजन करावे और भोजनोपरान्त भी पुनः दक्षिणा दे के उन्हें सत्कारपूर्वक विदा करें। पश्चात् यजमान एवं यजमान पत्नी यज्ञशेष को पहले खाकर फिर भोजन करें। इस प्रसंग में महर्षि ने भोजन के बाद भी दक्षिणा देने को लिखा है। जैसा कि आर्यसमाजियों से अन्य जनों में भोजन के बाद दक्षिणा देने की प्रथा है। आर्यसमाजियों को भी यह व्यवहार प्रचलित करना चाहिये। यह भी वैदिक विधि है।

न्यून दक्षिणा से शूद्रत्व की वृद्धि- यज्ञ के प्रारम्भ में वरण में कुण्डल, अंगूठी, उत्तम वस्त्रादि और यज्ञ के अन्त में उत्तम दक्षिणा, पुनः भोजनोपरान्त दक्षिणा देने के लिये विधान किया है। कुछ लोग कहेंगे कि-यह तो बहुत हो जाता है । तो क्या आप चाहते हैं कि वैदिक विद्वानों को बहुत न दिया जावे और उनका शोषण ही होता रहे। वैदिक विद्वानों के शोषण से वेद की ही हानि हो रही है। हमारा समाज वेदप्रेमी होते हुये भी वेदविहीन होता जा रहा है। हम भजन-कीर्तन के एवं व्यर्थ के जोशीले व्याख्यानों के प्रवाह में बढ़े जा रहे हैं। इस प्रकार वेद और वैदिक विद्वानों की उपेक्षा से शूद्रत्व की वृद्धि हो रही है और आस्तिक कहे जाने वाले समाज में नास्तिकता का साम्राज्य फल-फूल रहा है। यह सामाजिक तथा जातिगत अपराध

है। अतः इसका फल आर्यसमाज को बुरी तरह से भोगना पड़ेगा और भोगना पड़ रहा है। परिणामतः आज हमें कहीं भी उन्नति तो दृष्टिगोचर नहीं हो रही है अपितु सर्वत्र अवनति, कलह और विनाश ही दृष्टिगोचर हो रहा है। यह सब अपने उद्देश्य से विमुख होने का परिणाम है।

दक्षिणा कब देवें?- यज्ञ की दक्षिणा यज्ञ के तुरन्त बाद ही देनी चाहिये, विलम्ब से नहीं। विलम्ब से देने से यज्ञ और दक्षिणा का स्वरूप बिगड़ता है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने पूर्णाहुति के उपरान्त ही इस क्रिया का विधान किया है, अतः दक्षिणा की क्रिया पूर्णाहुति के पश्चात् तुरन्त ही करनी चाहिये। तुरन्त दक्षिणा देने के लाभ और विलम्ब से दक्षिणा देने में दोष को प्रकारान्तर से ग्रन्थों में निम्न प्रकार प्रकट किया गया है।

यज्ञो दक्षिणया सार्धं पुत्रेण च फलेन च।
कर्मिणां फलदाता चेत्येवं वेदविदो विदुः।।
कृत्वा कर्म च तस्यैव तूर्णं दद्याच्च दक्षिणाम्।
तत्कर्मफलमाप्नोति वैदैरुक्तमिदं मुने।।
कर्त्ता कर्मणि पूर्णे च तत्क्षणं यदि दक्षिणाम्।
न दद्याद् ब्राह्मणेभ्यश्च दैवेनाज्ञानतोऽथवा।।
मुहूर्त्ते समतीते तु द्विगुणा सा भवेद् ध्रुवम्।
एकरात्रे व्यतीते तु भवेत् शतगुणा च सा।।
त्रिरात्रे तद्दशगुणा, सप्ताहे द्विगुणा ततः।
मासे लक्षगुणा प्रोक्ता ब्राह्मणानां च वर्धते।।
संवत्सरे व्यतीते तु सा त्रिकोटिगुणा भवेत्।।

अर्थात् यज्ञ दक्षिणा के साथ पुत्र और फल के द्वारा यजमान को फलदाता होता है, ऐसा वेद के जानने वालों का अभिमत है। यज्ञ की समाप्ति पर तुरन्त ही दक्षिणा प्रदान करने से यज्ञ का फल प्राप्त होता है, ऐसा वेदों में प्रतिपादित किया है। यदि यजमान ऋत्विजों को यज्ञ के पश्चात् उसी क्षण दक्षिणा अज्ञान से या अन्य कारणों से नहीं देता है तो एक मुहूर्त बीत जाने पर उस दक्षिणा की मात्रा दुगुनी देनी चाहिये। यदि एक रात्रि का विलम्ब दक्षिणा देने में हो जावे तो सौ गुणा अधिक देना चाहिये। तीन रात्रि का विलम्ब हो जाने पर सौ गुणे का दश गुणा अर्थात् सहस्त्र गुणा अधिक दक्षिणा देनी चाहिये। एक सप्ताह का विलम्ब दक्षिणा देने में हो जाने पर उसका दो गुणा अर्थात् दो हजार गुणा दक्षिणा देनी चाहिये। यदि एक मास का विलम्ब हो जावे तो एक लाख गुणा और एक वर्ष का विलम्ब दक्षिणा में हो जावे तो ३ करोड़ गुणा दक्षिणा देनी चाहिये। यह सब विवरण दक्षिणा को तुरन्त देने के महत्त्व को प्रकट करता है। १ वर्ष के व्यतीत होने पर भी दक्षिणा के न देने पर यज्ञ का फल नष्ट हो जाता है, ऐसा विधान किया है।

दक्षिणा का अर्थ- दक्षिणा शब्द 'दक्ष' धातु से बनता है, जिसका अर्थ 'वृद्धि और शीघ्रता' है। अतः दक्षिणा से यजमान के यज्ञ के फल की वृद्धि होती है और शीघ्रता से भी होती है, यह ज्ञात होता है। इसीलिये प्राचीनकाल से आज तक यही मान्यता चली आ रही है कि यज्ञ में दक्षिणा अवश्य देनी चाहिये और तुरन्त देनी चाहिये, अन्यथा फल की प्राप्ति नहीं होती है। वेद ने दक्षिणा को यज्ञपत्नी कहकर उसका महत्त्व प्रकट किया है और उस दक्षिणा का नाम 'स्तावा' परमात्मा की ओर से निर्धारित किया होने से तो और भी विशेष महत्त्व हो जाता है। वेद के इसी अर्थ को प्रकट करने के लिये प्राचीन भाष्यकारों ने "**दक्षिणा वै स्तावा। दक्षिणाभिर्हि यज्ञः स्तूयते**" कहा है। अर्थात् यज्ञ की दक्षिणा का नाम 'स्तावा' है क्योंकि दक्षिणा से ही यज्ञ की प्रशंसा होती है। अतः दक्षिणा का महत्त्व समझना चाहिये।

वेद में दक्षिणा का महत्त्व- ऋग्वेद में दक्षिणा की प्रशंसा में कुछ मन्त्र हैं। उनमें बताया है कि-"दक्षिणा देने वाले यजमान दक्षिणा के प्रभाव से सात माताओं का दोहन प्राप्त करते हैं। दक्षिणा के प्रभाव से यजमान को महान् श्रेष्ठमार्ग प्राप्त होता है। दक्षिणा देने वाले, आयु को, अनेक सुखों को और मोक्ष को प्राप्त करते हैं" इत्यादि।

दक्षिणा का महत्त्व वेद में है तथा प्राचीन ऋषियों ने भी इसका प्रतिपादन किया है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने भी किया है, अतः इसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये और यथाशक्ति, श्रद्धापूर्वक बड़े सत्कार से देना चाहिये। ऋत्विजों को दी हुई दक्षिणा वेद को ही दी जा रही है, या वेद का ही यह सम्मान करना है तथा वेद को अर्पण किया गया धन परमात्मा को ही भेंट हो रहा है एवं इससे परमात्मा की प्रीति एवं प्रसन्नता प्राप्त होगी, ऐसा समझकर दक्षिणा देनी चाहिये।

अनेक दक्षिणाएं- ऋत्विग्वरण एवं यज्ञान्त की प्रमुख दक्षिणा के अतिरिक्त **ब्रह्मपीठ दक्षिणा** भी दी जाती है। यज्ञान्त की दक्षिणा से पूर्व सर्वप्रथम इसे ही ब्रह्मा के सामने की चौकी पर रखे वेद को अर्पित किया जाता है। यह वेद का पृथक् भाग रखना पड़ता है और वह ब्रह्मा का भाग होता है। इससे वेदादि ग्रन्थों के संरक्षण एवं क्रयादि में सहायता होती है। यह प्रथा उत्तम भी है, इसे भी प्रचलित करना चाहिये। ब्रह्मपीठ दक्षिणा के पश्चात् ब्रह्मा को दक्षिणा देनी चाहिये, पुनः अन्य ऋत्विजों को देना चाहिये। ब्रह्मा की दक्षिणा से आधी दक्षिणा अन्य ऋत्विजों को देना चाहिये। दक्षिणा में आसन, पात्र, फल, मेवा, अन्न, उत्तम वस्त्र एवं द्रव्य देना चाहिये। ऋत्विजों को वस्त्र आदि देते समय उनकी पत्नियों के लिये भी यथासंभव उत्तम वस्त्र आभूषण देने चाहिये।

भूयसी दक्षिणा एवं भोजन की दक्षिणा- इसके अतिरिक्त **भूयसी दक्षिणा** भी दी जाती है। मुख्य दक्षिणा के अतिरिक्त जो दक्षिणा बाद को दी जाती है और यज्ञ में उपस्थित सर्वसामान्य विद्वान् ब्राह्मणों को भी सत्कारार्थ जो द्रव्यादि दिया जाता है उसे **भूयसी दक्षिणा** कहते हैं। यह क्रिया भी वैदिकों के संरक्षण के लिये उत्तम है। इसके पश्चात् ऋत्विजों को सत्कारपूर्वक सबसे पृथक् रूप में भोजन यजमान एवं यजमान पत्नी करावें और भोजनोपरान्त भी दक्षिणा देवें। इतनी दक्षिणा की क्रिया करनी चाहिये।

यज्ञपात्र ऋत्विजों को दे देवें- ऋत्विजों को पात्र देने के सम्बन्ध में भी ध्यान देना आवश्यक है। अन्वाहार्य पात्र ऋत्विजों को दे देना चाहिये। अन्वाहार्य पात्रों का संस्कारविधि में लक्षण निम्नप्रकार लिखा है-

''**पुरुषचतुष्टयाहारपाकपरिमाणार्थम्**''

अर्थात् ऐसे पात्र जिनमें ४ व्यक्ति का भोजन बन सके। इसके अतिरिक्त यज्ञ के लिये जो पात्र आते हैं, वे भी यज्ञसमाप्ति पर ऋत्विजों को ही दे देने चाहिये, परन्तु आजकल इस बात को न समझकर यजमान उन्हें अपने पास ही रखते हैं। यज्ञ का तात्पर्य है देवपूजा, संगतिकरण और दान। अतः यज्ञ के लिये आये पात्रादि भी इसी निमित्त हुये। जो यज्ञ के लिये पात्र लाये जाते हैं उनसे देवपूजा अर्थात् होम किया जाता है और उनका होम कार्यों में संगतिकरण-उपयोग किया जाता है। दोनों प्रयोजन सिद्ध हो जाने पर उन पात्रों को ऋत्विजों को प्रदान कर देने से यज्ञ का पूर्ण अर्थ पात्रों में भी घटित हो जाता है। अतः यज्ञ के निमित्त आये पात्रादि को अपनी सम्पत्ति न समझकर उनको ऋत्विजों को ही दे देना चाहिये। अन्यथा दान की वस्तु का वह स्वयं उपभोक्ता और अधिकारी बनने का दोषी हो जाता है और यज्ञ के अर्थ को नष्ट करता है।

दक्षिणा देने का क्रम- दक्षिणादि द्वारा सम्मान करते समय सर्वाधिक सम्मान ब्रह्मा का, तदुपरान्त अन्य ऋत्विजों का, तदुपरान्त यज्ञ के अन्य सहयोगी व्यक्तियों, उपदेशकों, प्रचारकों एवं अन्य महानुभावों का करना चाहिये। **सब धान २२ पसेरी** न्याय के अनुसार व्यवहार नहीं करना चाहिये। आशा है आर्यजन दक्षिणादि के व्यवहार के बारे में इस पर ध्यान देकर सुधार करेंगे।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल, अग्नि के बीच में उनका होम कर, शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं। - **महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८**

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

राष्ट्रिय वेद संगोष्ठी-जोधपुर

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति न्यास, जोधपुर तथा संस्कृत विभाग जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में 'ऋग्वेदीय इन्द्र-देवताक सूक्त मीमांसा' विषय पर १९-२१ जनवरी २०१८ को महर्षि दयानन्द स्मृति भवन में त्रिदिवसीय शोधसंगोष्ठी सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई। इसमें पं. सत्यानन्द वेदवागीश, डॉ. वेदपाल मेरठ, डॉ. महावीर मीमांसक दिल्ली, डॉ. विनय विद्यालंकार हल्द्वानी, श्री सज्जनसिंह कोठारी (लोकायुक्त राजस्थान), प्रो. जयप्रकाश नारायण द्विवेदी द्वारका-गुजरात, डॉ. देवेन्द्रनाथ पाण्डेय सोमनाथ, गुजरात, डॉ. उमापति मिश्र बी.एच.यू. वाराणसी, डॉ. नन्दिता शास्त्री वाराणसी, डॉ. हरिनारायण तिवारी जम्मू, डॉ. महानन्द झा, डॉ. उमा आर्य दिल्ली, प्रो. प्रभावती चौधरी, प्रो. सत्यप्रकाश दुबे, आचार्य कपिल जोधपुर, डॉ. नन्दिता सिंघवी बीकानेर, प्रो. दयानन्द भार्गव, प्रो. गणेशीलाल सुथार आदि विद्वानों के साथ आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक तथा डॉ. रामनारायण शास्त्री ने भाग लिया।

संगोष्ठी में बीज भाषण डॉ. वेदपाल का हुआ। आपने इन्द्र के स्वरूप निर्धारण में उसके स्थान, तत्सहचारी देवों के भक्तिसाहचर्य आदि के महत्त्व को रेखांकित कर-इन्द्र के अभिधेय-विद्युत्, ईश्वर, जीव, सेनापति आदि अर्थों पर प्रकाश डालते हुए इन्द्र के अर्थ निर्धारण में ब्राह्मण ग्रन्थों की उपयोगिता को रेखांकित किया। मुख्य अतिथि प्रो. रामपाल सिंह, कुलपति जोधपुर ने वेदाध्ययन में महर्षि दयानन्द के योगदान की भूरिशः प्रशंसा की। तकनीकी सत्रों में विभिन्न विद्वानों ने अपना चिन्तन प्रस्तुत किया। आ. अग्निव्रत नैष्ठिक ने ऐतरेय ब्राह्मण पर किए जा रहे अपने भाष्य की चर्चा की।

डॉ. विनय विद्यालंकार ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका को दृष्टिगत कर इन्द्र अहल्या सम्बन्ध का विवेचन किया। **डॉ. नन्दिता शास्त्री द्वारा ब्राह्मण भाग वेद नहीं कहने पर आपत्ति करते हुए डॉ. महानन्द झा ने इसे न्याय प्रोक्त पञ्चावयव वाक्य द्वारा सिद्ध करने की चुनौती दी। डॉ. हरिनारायण तिवारी ने ''ब्राह्मणः न वेदः'' आर्यसमाजाभिमत प्रतिज्ञा वाक्य उपस्थापित कर सिद्ध करने की चुनौती देते हुए कहा कि इस सम्प्रदाय (आर्यसमाज) के लोग हजार प्रयत्न करने पर भी इसे सिद्ध नहीं कर सकते। डॉ. महावीर मीमांसक ने 'तच्चोदकेषु मन्त्राख्या' 'शेषे ब्राह्मणशब्दः' इन मीमांसा सूत्रों के आधार पर मन्त्रब्राह्मण का पार्थक्य सुस्पष्ट किया। समापन सत्र के मुख्यवक्ता डॉ. वेदपाल ने-डॉ. झा एवं डॉ. तिवारी की शैली में ही 'अनीश्वरोक्तत्वाद' तथा 'महिदासयाज्ञवल्क्यादिऋषिप्रोक्तत्वाद ब्राह्मणः न वेदः' ब्राह्मणग्रन्थों का वेद न होना प्रतिपादित किया। इस स्थिति में डॉ. तिवारी ने वेद को ही अनीश्वरोक्त कह दिया, जिससे वह स्वयं निग्रह स्थान (पराजय स्थान) में पहुँच गए। इससे झा व तिवारी दोनों मौन धारण कर गए।** उपस्थित जनसमूह ने महर्षि पक्ष की श्रेष्ठता स्थापन पर करतल ध्वनि से प्रसन्नता प्रकट की।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

क्या जैनमत वेदों से भी प्राचीन है?

विरजानन्द दैवकरणि

जैनमत के विद्वान् प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी ने 'श्रमण संस्कृति और वैदिक व्रात्य' नामक एक ग्रन्थ लिखा है, उसे भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, दिल्ली की ओर से प्रकाशित किया गया है।

इस ग्रन्थ में लेखक ने पूर्वाग्रह से ग्रस्त होकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि जैनमत सबसे प्राचीन है। इसे सिन्धुघाटी में मिली अभी तक अज्ञात मोहरों में भी ऋषभ आदिनाथ तीर्थंकर सिद्ध किया है तथा लिखा है कि सिन्धु सभ्यता के बाद आर्यों द्वारा रचित वेदों में भी ऋषभदेव की चर्चा पर्याप्त है तथा वैदिक साहित्य ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, अष्टाध्यायी, रामायण, महाभारत और पुराणों में भी ऋषभदेव का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। शिव और ऋषभ एक ही व्यक्ति थे। वेद के 'वृषभ' पद को भी यह लेखक ऋषभ ही मानता है।

मोहनजोदड़ो से मिली एक मुद्रा पर पीपल की दो शाखाओं के मध्य एक स्त्री चित्रित है, उसके पास एक स्त्री इसे अभिवादन करती दृष्टिगोचर हो रही है। नीचे सात स्त्रियाँ चित्रित हैं।

इस मोहर पर चित्रित पीपल की शाखाओं के मध्य स्त्री को यह सज्जन नग्न ऋषभ मानता है तथा नमन करती हुई स्त्री को भरत मान रहा है, यह भरत को ऋषभ का पुत्र कहता है। अथर्ववेद के व्रात्य प्रकरण को भी लेखक ने ऋषभदेव विषयक माना है। ऋषभदेव को व्रात्य संस्कृति का प्रवर्तक मानकर व्रात्य संस्कृति को श्रमण संस्कृति माना है। वैदिक ब्राह्मणों द्वारा किये गये यज्ञों में हिंसा की जाती थी, यह मानकर कहता है कि इसका विरोध करने वाले श्रमण थे, इसी कारण ब्राह्मण श्रमणों के विरोधी हो गये। इस प्रकार की एकपक्षीय बात सिद्ध करने के लिए पूरा ग्रन्थ रचा गया है।

प्रतीत होता है कि लेखक वेद, वैदिक साहित्य आदि से सर्वथा अज्ञ है, अन्यथा वेदों को सिन्धु सभ्यता से बाद का मानना, आर्यों का बाहर से आकर यहाँ के मूल निवासी द्रविड़ों को मारकर अपना वर्चस्व स्थापित करना आदि बातें लिखना, मानना और प्रचारित करना अज्ञानता का सूचक है। लेखक को सारे प्राचीन वाङ्मय में ऋषभ देव के अतिरिक्त और कुछ दिखाई ही नहीं देता। ऐसे भ्रान्त ग्रन्थ को प्रकाशित करके ज्ञानपीठ और केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली ने वित्तीय सहायता देकर धन का दुरुपयोग तथा असत्य, अज्ञान और हठधर्मिता में वृद्धि ही की है।

प्राचीन भारतीय महापुरुषों में प्रचलित स्वस्तिक, त्रिशूल, वृषभ और ऋषिपंचमी आदि को जैनमत की अपनी उपज मानकर, इनके प्राचीन होने को भी अस्वीकार किया गया है। लेखक की मान्यता है कि ऋषभदेव ने ही अपनी ब्राह्मी नामक कन्या को लिपि विद्या सिखाई तथा सुन्दरी नामक दूसरी कन्या को अंक विद्या सिखाई। इस प्रकार ब्राह्मी लिपि और अंकों का प्रथम प्रचारक ऋषभदेव को ही माना है। पाणिनि मुनि द्वारा रचित प्रत्याहार सूत्रों को भी ऋषभदेव द्वारा रचित माना है और हेतु यह दिया है कि ऋषभदेव और शिवजी एक ही व्यक्ति थे अतः जो चौदह सूत्र शिवजी द्वारा प्रणीत माने जाते हैं, वे ऋषभदेव के ही हैं।

लेखक ने अपनी मान्यता की पुष्टि में अंग्रेज लेखकों को परम प्रमाण मानकर उद्धृत किया है तथा पुराणों के प्रमाण देकर भी यह सिद्ध किया है कि यह ऋषभदेव ही आदि देव हुए हैं। वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पुराण आदि में इन्हीं का वर्णन और गुणगान है।

'कुमारश्रमणादिभिः' पाणिनि मुनि द्वारा पठित इस सूत्र के श्रमण पद को लेखक ने जैन मतावलम्बी श्रमण से परिभाषित किया है। लेखक को ज्ञान होना चाहिये कि श्रमण शब्द भिक्षु मात्र के लिए व्यवहृत होता था, न कि जैन मतावलम्बी के लिए। वैदिक धर्म के विरोधी को भी श्रमण कहा जाता था। इसी शब्द को जैनों ने अपना लिया, क्योंकि वे भी वैदिक मान्यताओं के विपरीत आचरण करते थे। लेखक वेद में प्रयुक्त अर्हत् आदि पदों को भी जैन से सम्बद्ध मानता है जबकि यह शब्द प्रशंसित पुरुष का वाचक है। क्या जैनों से अतिरिक्त अन्य मतों में प्रशंसा

योग्य व्यक्ति नहीं होते?

नये अन्वेषणों से जो पुरानी मान्यतायें असिद्ध हो चुकी हैं, उन्हें यह लेखक अभी तक गले से चिपटाये बैठा है। जैन ग्रन्थों में जो असम्भव बातें वर्णित हैं उनकी ओर लेखक ने किंचित भी संकेत नहीं किया है। करते भी कैसे? संसार का कोई भी प्रबुद्ध व्यक्ति उनसे सहमत नहीं हो सकता। जैसे-श्राद्धदिन कृत्य तथा रत्नसार आदि ग्रन्थों में इस प्रकार के लेख हैं-

१. कुमारपाल ने पाँच कौड़ी का फूल मूर्ति पर चढ़ाया तो १८ देशों का राज्य पाया।

२. सिद्धपुरुष जिस सिद्धशिला पर रहते हैं वह ४५ लाख योजन लम्बी और आठ योजन चौड़ी है। वह शिला चौदहवें लोक की शिखा पर है।

३. कृष्णादि नव वासुदेव और प्रहलादादि प्रतिवासुदेव नरक में गये।

४. जिन-मूर्तियों की पूजा से सब पाप छूट जाते हैं।

५. महादेव, विष्णु आदि पत्थर की नौका के समान डुबाने वाले हैं।

६. नन्दीषेण ने दस पूर्व तक भोग किया, स्थूलमुनि ने वेश्या से भोग किया और दीक्षित होकर स्वर्ग गया।

७. अर्णकमुनि चरित्र से चूक, कई वर्ष तक दत्त सेठ के घर में भोग करके देवलोक को गया।

८. श्रीकृष्ण और धन्वन्तरि वैद्य नरक में गये।

९. जैनमत से भिन्न अन्य मत वाले को खाने-पीने की चीज भी नहीं देनी चाहिये।

१०. शंख, कौड़ी और जूं अड़तालीस कोश जितने स्थूल होते हैं।

११. बिच्छू, बगाई, कसावी और मक्खी चार कोश लम्बे होते हैं।

१२. जलचर मछली का शरीर एक करोड़ कोश का होता है।

१३. हाथी की देह दो कोश से लेकर नौ कोश तक लम्बी और चौरासी हजार वर्ष आयु होती है।

१४. अन्न पकाने, भूनने, कूटने, पीसने आदि में पाप होता है।

१५. बगीचा लगाने से माली को एक लाख पाप लगता है।

१६. ऋषभदेव का शरीर ५०० धनुष लम्बा और चौरासी लाख पूर्व आयु का था।

१७. महावीर को सर्प ने काटा, रुधिर के बदले दूध निकला, वह सर्प ८ वें स्वर्ग को गया।

१८. महावीर के पग पर खीर पकाई और पग न जले।

१९. छोटे से पात्र में ऊँट बुलाया।

२०. शरीर के मैल को न उतारें और न खुजलावें।

२१. महावीर तीर्थंकर के प्रिय साधु ने उद्वेगजनक सूत्र पढ़कर शहर में आग लगा दी।

२२. कोशा वेश्या ने थाली में सरसों की ढेरी लगाकर उसके ऊपर फूलों से ढकी सूई खड़ी करके उस पर अच्छी प्रकार नाच किया, परन्तु सूई पग में न गड़ी और सरसों की ढेरी बिखरी नहीं।

२३. एक सिद्ध की कन्या जो गले में पहनी जाती है। वह ५०० अशरफी एक वैश्य को प्रतिदिन देती रही।

२४. नागकेत ने ग्राम के बराबर एक शिला अंगुली पर धर ली।

२५. महावीर ने अंगूठे से धरती को दबाया, उससे शेषनाग काँप गया।

यह संकेत मात्र है। इस प्रकार की सैकड़ों बातें जैनमत के ग्रन्थों में हैं।

क्या ऋषभदेव ने यही जैनमत प्रारम्भ किया था?

प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी बतायेंगे कि क्या इसी प्रकार के उपदेश ऋषभदेव जी ने दिये थे, जिसे आप आदि स्रष्टा, महादेव, शिव, आदिनाथ, वृषभ, आदि जिन, आदिभगवान् मानते हैं? आपने लिख तो बहुत लिया, अब कुछ पढ़ भी लें जिससे अज्ञान दूर होने की सम्भावना है। केवल शैक्षणिक उपाधि प्राप्त करने से, महाविद्यालयों में प्रोफेसर पद पर रहने से तथा सम्प्रदाय विशेष की ओर से पुरस्कार पाने से ही कोई व्यक्ति ज्ञानी नहीं माना जा सकता। इसके लिए सदसद्विवेकिनी प्रज्ञा की आवश्यकता होती है, जो पक्षपातरहित होकर चतुर्मुखी प्रज्ञा से शास्त्रों का गहन अध्ययन करके जनता के सम्मुख सत्य का स्थापन करे, जिससे आत्मकल्याण के साथ-साथ जन सामान्य का भी हित हो सके।

श्रद्धा सुमन

प्रो. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

जब विद्या बिकती थी- उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी की देन व उपलब्धियों का मूल्याङ्कन करते हुए यह लिखा है कि राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान के लिये आपने जो कार्य किया, उसका कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। जब अन्य बाजारी वस्तुओं के सदृश विद्या भी बिकती थी, तब स्वामी श्रद्धानन्द ही थे जिन्होंने गुरुकुल शिक्षा पद्धति में भारत के उद्धार का तत्त्व समझा। ''समय उनके अनुकूल न था, विरोधियों का पूछना ही क्या, चारों ओर बाधायें ही बाधायें। पर वे जितने आदर्शवादी थे, उतने ही हिम्मत के धनी थे। किसी बात की परवाह न करते हुये उन्होंने गुरुकुल की स्थापना कर दी।''

छुआछूत के धर्म की जी-जान से निन्दा की- महान् देशभक्त, विचारक और तपस्वी लाला हरदयाल ने लिखा है, ''पौराणिक मूर्तिवाद के प्रचारकों ने हिन्दू-समाज में छुआछूत की प्रथा को प्रचलित कर दिया था। वह छुआछात का धर्म घृणा का धर्म है। ऐसा धर्म वैदिक धर्म की पवित्र भावनाओं के प्रतिकूल है। स्वामी श्रद्धानन्द ने छुआछूत के धर्म की जी-जान से निन्दा की। वेद सार्वभौम मानव-धर्म के स्रोत हैं। उन्होंने वैदिक धर्म की विश्वव्यापी शोभा तथा आभा को संसार में स्थापित करने के लिए भागीरथ प्रयत्न किया और अन्तिम क्षण तक इस उद्देश्य की पूर्ति में लगे रहे। इस महान् उद्देश्य के लिए आन्दोलन करते हुए प्रत्येक हिन्दू को उनके इस पवित्र बलिदान-यज्ञ में अपना-अपना भाग समर्पित करना चाहिए, जिससे स्वामी श्रद्धानन्द की स्मृति सदा चिरजीवी हो।''

जीवन और मृत्यु दोनों ही बलिदानस्वरूप- देवता स्वरूप भाई परमानन्द जी ने उनके अमर बलिदान पर कहा था, ''उनके पिछले जीवन का हरेक क्षण धर्म के लिये बलिदान का क्षण था। यदि उनकी मृत्यु वैसी ही सामान्य रूप से हो जाती तो साधारण जनता को इस सच्चाई का अनुभव न हो पाता। मुझे तो हर्ष है कि एक हत्यारे ने अपने इस कार्य से सारी दुनिया को दर्शा दिया कि स्वामी जी का जीवन ऐसे ही बलिदान का जीवन था जैसा कि उनकी मृत्यु हुई।''

उस वीर संन्यासी का स्मरण- भारत के लौह पुरुष सरदार पटेल ने उनका स्मरण करते हुये यह कहा था कि स्वामी श्रद्धानन्द जी की याद आते ही १९१९ का दृश्य मेरी आँखों के सामने खड़ा हो जाता है। सरकारी सिपाही फायर करने की तैयारी में हैं। स्वामी छाती खोलकर सामने जाते हैं और कहते हैं, ''लो चलाओ गोलियाँ।'' उनकी उस वीरता पर कौन मुग्ध नहीं हो जाता? मैं चाहता हूँ कि उस वीर संन्यासी का स्मरण हमारे अन्दर सदैव वीरता और बलिदान के भावों को भरता रहे।

सङ्कट वाले स्थान पर स्वयं आप- पंजाब के उस युग के एक अग्रणी ब्रह्मसमाजी तथा समाजसेवी नेता प्रो. रुचिराम जी की स्वामी जी से लम्बे समय तक मैत्री रही। उठती जवानी में दोनों एक-दूसरे के निकट आ गये। प्रो. रुचिराम ने उन्हें अति निकट से देखा और वह सदा उनके पौरुष, साहस व सद्गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुये कहा करते थे कि स्वामी श्रद्धानन्द जी की एक विशेषता यह थी कि वे खतरे वाले स्थान पर स्वयं उपस्थित होते थे। अपने इसी गुण के कारण वे अपने पीछे खड़ी जनता को विपत्तियों का सामना करने व टकराने के लिये तैयार कर लेते थे।

जब सत्य का प्रत्यक्ष कर लेते थे- प्रो. रुचिराम जी ने लिखा है कि वे जब सत्य का प्रत्यक्ष कर लेते थे तो फिर उस सच्चाई को अपने जीवन में, व्यवहार में लाने में कतई संकोच नहीं करते थे। वही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने अपने आर्य बन्धुओं के विरोध के होने पर भी जाति-बन्धन तोड़कर एक उदाहरण प्रस्तुत किया। प्रो. रुचिराम ने उनकी शूरता का वर्णन करते हुये लिखा है, ''मैंने स्वयं अकालियों के सभा-स्थान के पास स्वामीजी को गिरफ्तार होते हुए देखा था। सत्याग्रह आन्दोलन में जब गाँधी जी ने घोषणा की तो स्वामी जी उस आन्दोलन की अगली पंक्ति में खड़े दिखाई दिये। मुम्बई के प्रसिद्ध नेता श्री नटराज ने अमृतसर

कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा दूरस्थ प्रदेशों से आये हुए प्रतिनिधियों की देखभाल और सुख-सुविधा का ध्यान रखने की बहुत प्रशंसा की थी।''

एक साथ अनेक कार्य करते रहे- प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी और सनातन धर्म के उदार नेता श्री पं. नेकीराम जी शर्मा ने उनके बलिदान के समय कहा था, ''स्वामी जी निर्भय थे, धुन के पक्के थे और अपने विचारों को बहुत स्पष्टतया प्रकट करने वाले थे। स्पष्टवादिता के कारण वह कितनी ही बार अपने साथी मित्रों और अनुयायी भक्तों को भी रुष्ट कर दिया करते थे।

स्वामी जी का कार्यक्षेत्र सीमाबद्ध न था। वह एक ही साथ अनेक भिन्नरूप क्षेत्रों में कार्य आरम्भ कर देते थे और तन्मयता से सभी को पूरा करते थे। शिक्षा, सम्पादन, सामाजिक सुधार, आर्य संस्कृति की रक्षा, नारी-हितों का संरक्षण, आध्यात्मिक उन्नति, धार्मिक विचारों में स्वातन्त्र्य, देशहित, नवयुवकों की अभिभावकता, संगठन-शक्ति और दलितों का उद्धार इत्यादि महत्त्वपूर्ण विषयों में स्वामी जी ने बहुत कार्य किया है और प्राय: सभी जगह वह सफल भी हुये। प्राय: लोगों का जीवनकाल ही किसी कार्य का सहायक हुआ करता है, पर स्वामी जी का मरणकाल तो जीवन से भी अधिक जाति के अभ्युदय का साधन बन गया।''

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इससे ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेषकर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. वेदपथ के पथिक (आचार्य धर्मवीर स्मृति ग्रन्थ)

पृष्ठ संख्या-२६४

मूल्य-रु. २००/-(आधे मूल्य पर उपलब्ध)

परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का जीवन सत्य के लिये संघर्षपूर्ण रहा है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने ईश्वर, वेद और धर्म को अपने जीवन से तनिक भी अलग नहीं होने दिया और यही विशेषता रही, जिसके कारण वे एक आदर्श आचार्य, आदर्श नेता, आदर्श लेखक, आदर्श सम्पादक एवं आदर्श उपदेशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके जीवन की कही-अनकही घटनाएँ हमें भी प्रेरणा दें, इस दृष्टि से ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय है। जिन्होंने डॉ. धर्मवीर जी को निकट से देखा है, जो उनके जीवन की घटनाओं के साक्षी रहे हैं, उनके संस्मरण इस कर्मयोगी के जीवन की बारीकियों को उजागर करते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में चित्रों के माध्यम से भी उनके जीवन की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र-

पृष्ठ संख्या-३३६ **मूल्य**-रु. २००/-

महर्षि दयानन्द, उनके उद्देश्यों, कार्यों, योजनाओं एवं व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा लिखे पत्र उतने ही उपयोगी हैं, जितना कि उनका जीवन-चरित्र। ये पत्र महर्षि के हस्तलिखित हैं। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें मूल-पत्रों की प्रतिलिपि दी गई है और साथ ही वह पत्र टाइप करके भी दिया गया है। यह पुस्तक विद्वानों के दीर्घकालीन पुरुषार्थ का फल है। जनसामान्य इससे लाभ ले-यही आशा है।

३. अंग्रेज जीत रहा है-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-२२२ **मूल्य**-रु. १५०/-

इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के 'भाषा और शिक्षा' विषय पर लिखे गये ४२ सम्पादकीयों का संकलन किया गया है। 'परोपकारी' पत्रिका में लिखे गये इन सम्पादकीयों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की माँग समय-समय पर उठती रही है। अत: पुस्तक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। डॉ. धर्मवीर जी का चिन्तन बेजोड़ था। वे जिस विषय पर जो भी लिखते वह अद्वितीय हो जाता था। उनके अन्य सम्पादकीयों का प्रकाशन भी प्रक्रिया में है। पुस्तक का आवरण व साज-सज्जा अत्याकर्षक है।

४. स्तुता मया वरदा वेदमाता-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१३५ **मूल्य**-रु. १००/-

वेद ईश्वर प्रदत्त आचार संहिता है। वेद की आज्ञा ईश्वर की आज्ञा है और वही धर्म है, इसलिये मानव मात्र की समस्त समस्याओं का समाधान वेद में होना ही चाहिये। वेद के कुछ ऐसे ही सूक्तों की सरल सुबोध व्याख्या ही इस पुस्तक में की गई है। पुस्तक की भाषा इतनी सरल है कि नये-से नये पाठक को भी सहज ही आकर्षित कर लेती है। व्याख्याता लेखक आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के गहन आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक चिन्तन व अनुभवों के परिणामरूप यह पुस्तक है।

५. इतिहास बोल पड़ा–

लेखक – प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

पृष्ठ संख्या–१५९ **मूल्य**–रु. १००/–

इस पुस्तक में इतिहास की परतों से कुछ दुर्लभ तथ्य निकालकर दिये गये हैं, जो कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरव का बखान करते हैं। पुस्तक के लेखक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु हैं। ऋषि के समय में देश–विदेश से छपने वाले पत्र–पत्रिकाओं के उद्धरण इस पुस्तक में दिये गये हैं।

६. बेताल फिर डाल पर

लेखक – प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या–१०४ **मूल्य**–रु. ६०/–

डॉ. धर्मवीर जी की हॉलैण्ड एवं अमेरिका यात्रा का विवरण एवं अनुभव इस पुस्तक में है। विदेश में आर्यसमाज की स्थिति, कार्यशैली, वहाँ की परिस्थितियाँ एवं विशेषताओं को यह पुस्तक उजागर करती है। यायावर प्रवृत्ति के विद्वान् आचार्य धर्मवीर जी की यह पुस्तक एक प्रचारक के जीवन पर भी प्रकाश डालती है।

७. लोकोत्तर धर्मवीर–

लेखक – तपेन्द्र वेदालंकार,

पृष्ठ संख्या–४४ **मूल्य**–रु. २०/–

तपेन्द्र वेदालंकार (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.) ने इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के जीवन की कुछ ऐसी घटनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनसे धर्मवीर जी के महान् लक्ष्यों व तदनुरूप कार्यशैली का पता चलता है। इस लघु पुस्तक से प्रेरणा लेकर प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के उद्देश्यों को पूर्ण करने में उत्साहित हो–यही आशा है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम – **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम – **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या – **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

अतिथि–यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि–यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

पुस्तक समीक्षा

'वेदोक्त ज्योतिष एवं वेदार्थ'

शिवनारायण उपाध्याय

स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती द्वारा रचित 'वेदोक्त ज्योतिष एवं वेदार्थ' नामक ग्रन्थ पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती की वैदिक वाङ्मय पर गहरी पकड़ है। आपने अपने निर्णय के पक्ष में जहाँ केवल एक प्रमाण की आवश्यकता हो वहाँ भी वैदिक वाङ्मय से कई-कई प्रमाण प्रस्तुत कर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया है।

ग्रन्थ दो भागों में विभाजित है पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध। पहले भाग में वैदिक मान्यता के पक्ष में २४ समुल्लास हैं और दूसरे भाग में फलित ज्योतिष पर १८ समुल्लासों में उसके असत्य और अवैज्ञानिक होने के आक्षेप लगाये हैं। फलित ज्योतिषियों से अपने पक्ष को सिद्ध करने हेतु कुछ प्रश्नों का उत्तर देने को कहा गया है। जिनका उत्तर देना फलित ज्योतिषियों के लिए असंभव है।

पूर्वार्द्ध के प्रथम समुल्लास में बताया गया है कि मानव जीवन का परम उद्देश्य मोक्षप्राप्ति है। मोक्षप्राप्ति बिना ज्ञान के संभव नहीं है। ज्ञान का मूलाधार वेद है अतः वेदाध्ययन मोक्षप्राप्ति का मुख्य साधन है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय।।

यजु. ३१.१८

सूर्य के समान प्रकाशस्वरूप, प्रकृति अथवा अज्ञानान्धकार से दूर विद्यमान इस महान् पुरुष को जानें। उसको जानकर ही मृत्यु आदि दुःखों से बचा जा सकता है।

फिर वैदिक परम्परा में ज्योतिष को वेद का चक्षुस्थानीय माना है।

फलित ज्योतिषी का कहना है कि ज्योतिष वह है जिससे भूत, वर्तमान और भविष्यत् की बातों को जान लेते हैं। जिसके द्वारा किसी कार्य की सफलता के लिए मुहूर्त बताया जाता है। पंचाङ्ग निर्माण, तिथि आदि का जिसके द्वारा ज्ञान होता है। इसका उत्तर यह है कि पंचाङ्ग वही होता है जो वेद के प्रत्येक मन्त्र के अर्थज्ञान में उपयोगी हो। मुहूर्त बतलाने वाले ग्रन्थ, भूत, वर्तमान और भविष्यत् की बातें बताने वाले ग्रन्थ अथवा काल को बताने वाले ग्रन्थ वेदाङ्ग नहीं हो सकते, क्योंकि वेद मन्त्रों के अर्थ जानने में उनका उपयोग नहीं हो सकता है। वास्तव में ज्योतियों को आधार बनाकर रचा हुआ ग्रन्थ ज्योतिष कहलाता है। ज्योतिष शास्त्र जगत् का एवं जगत्कर्ता परमात्मा का बोध कराता हुआ वेदार्थ बोध कराने से वेदाङ्ग है। दूसरे समुल्लास में बताया गया है कि ज्योतिष का अध्ययन क्यों करें?

ज्योतिष अध्ययन करने के निम्न प्रयोजन हैं-

१. ब्रह्म प्राप्ति-ज्योतिषा बाधते तमः। ऋ. ५.८२.५

ज्योति के द्वारा अज्ञान दूर होता है। ज्योतियों की ज्योति परमात्मा को जानने एवं परमानन्द को प्राप्त करने के लिए ज्योतिष को पढ़ना चाहिए।

२. सृष्टि विज्ञान- कल्पनातीत सृष्टि का ज्ञान इसी शास्त्र से होता है।

३.नास्तिक्य निवारण- इस अचिन्त्य, अप्रमेय, अनादि अनन्त विश्व का ज्ञान होने पर मानव की नास्तिकता दूर हो जाती है।

४. तत्त्व ज्ञान- वेद के अनुसार पिण्ड का अधिपति आत्मा है और ब्रह्माण्ड का अधिपति परमात्मा है। शेष प्रकृति है। सृष्टि का उपादान प्रकृति है। ज्योतिष के अध्ययन से यह तत्त्व ज्ञान हो जाता है। तत्त्वज्ञान मुक्ति में सहायक होता है।

५. अघमर्षण- जीवन में अघमर्षण करने अर्थात् निष्पाप होने के लिए ज्योतिष का अध्ययन करना चाहिए।

६. वेदार्थ ज्ञान- वेद का ज्ञान ज्योतिष के ज्ञान से ही संभव है।

७. आगम- आप्त प्रमाणों का अनुसरण करके भी ज्योतिष का अध्ययन करना चाहिए।

तीसरे समुल्लास में ज्योतिष के अनध्ययन से होने वाले अनर्थों पर विचार किया गया है। इनमें से कुछ इस

प्रकार हैं-

१. वेदों के साथ अनर्थ- वेदों को ठीक से जानने के लिए ज्योतिष का गहन ज्ञान आवश्यक है। इसके अभाव में यदि वेद पर कुछ लिखेंगे तो अनर्थ किये बिना नहीं रह सकते।

२. अन्धविश्वास- मकर संक्रान्ति के विषय में-२२ दिसम्बर के दिन सूर्य उत्तरायण में प्रवेश करता है। उस दिन रात्रि का मान सर्वाधिक होता है तथा दूसरे दिन से रात्रि का मान धीरे-धीरे घटने लग जाता है। यह सूर्य का मकर राशि में संक्रमण है अतः यही पर्व का दिन है। इसी दिन मकर संक्रान्ति मनाना चाहिए, किन्तु फलित ज्योतिषी मकर संक्रान्ति १४ जनवरी को मनाते हैं, जो अज्ञान के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

३. मोक्ष का कारण- फलित ज्योतिष के अनुसार उत्तरायण में मृत्यु होने पर जीवात्मा मुक्ति प्राप्त कर लेता है जो निरा अज्ञान है।

४. अद्वैतवाद की असत्यता- अद्वैतवाद वेदादि सत्यशास्त्रों के विरुद्ध है, ज्योतिष इसे बताता है।

५. सृष्टि की उत्पत्ति का वास्तविक ज्ञान प्राप्त कराने में भी ज्योतिष सहायक है। पुराणों में इस विषय में वेद विरुद्ध वर्णन हुआ है।

६. सृष्टि काल- वैदिक परम्परा के अनुसार सृष्टि को उत्पन्न हुए लगभग २ अरब वर्ष हुए हैं। जबकि ईसाई सृष्टि की उत्पत्ति ईसा पूर्व ४००४ वर्ष मानते हैं, जो विज्ञान की मान्यता के भी विरुद्ध है।

७. विश्व का स्वरूप कल्पित- वेद विद्या शून्य लोगों ने मध्यकाल में अगोचर पदार्थों के विषय में मनमानी कल्पना की है।

८. पृथ्वी को स्थिर और चपटी मानना भी अज्ञान है। इसके आयतन के विषय में भी जो कुछ कहा है वह अज्ञान जनित ही है। पृथ्वी घूमती है, इसे न मानना भी केवल पक्षपात ही है। वर्तमान में वैज्ञानिकों ने उपग्रहों में बैठकर पृथ्वी को घूमते हुए देख लिया है।

९. फलित ज्योतिषी गुरुत्वाकर्षण के विषय में कुछ नहीं जानते हैं। इसी प्रकार अन्य कई मान्यताएँ हैं जो ज्योतिष के न जानने से बनी हैं।

चौथे समुल्लास में जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय पर विचार किया गया है। प्रकृति, जीव और परमात्मा को अनादि माना गया है और तर्कपूर्ण प्रमाणों से इसे सिद्ध भी किया गया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

ऋ. १.१६४.२०

यह मन्त्र त्रैतवाद को सिद्ध कर रहा है।

फिर पञ्चभूतों से बने लोक-लोकान्तरों के छः विभाग हैं-नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह, धूमकेतु, उल्का और नक्षत्रिय! नक्षत्र असंख्य हैं। नक्षत्र का अर्थ सूर्य है। पाँचवें समुल्लास में इन पर विचार हुआ है।

ग्रह-सूर्य (नक्षत्र) को आश्रित करके उसके चारों ओर निरन्तर भ्रमण करने वाले लोकों को ग्रह कहते हैं।

उपग्रह- जो ग्रहों के समीप रहकर ग्रहों एवं नक्षत्रों से प्रकाश और ऊर्जा आदि ग्रहण करते हुए ग्रहों की परिक्रमा करते हैं, वे तारे ग्रह कहलाते हैं।

धूमकेतू- पुच्छल धुएँ के समान अति दीर्घ पुच्छ से युक्त होकर सूर्य के चारों ओर भ्रमण करने वाले लोकों को धूमकेतु कहते हैं।

उल्काएँ- रात्रि में अत्यन्त तीव्रता से प्रकाशित होकर वेग से आकर भूमि पर गिरने वाले पदार्थों को उल्का कहते हैं।

छठे समुल्लास में ग्रहों की संख्या और नक्षत्रों के विषय में चर्चा है। वेद में वर्णन है कि सृष्टि में लाखों निहारिकामण्डल, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह, उल्काएँ आदि हैं और सभी चलायमान हैं। ध्रुवतारा भी स्थिर नहीं है, वह भी चलायमान है। वास्तव में आकाश में कोई भी आकाशीय पिण्ड न तो स्थिर है और न स्थिर रह ही सकता है।

सातवें समुल्लास में बताया गया है कि आकाश में स्थित सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, द्युलोक, सम्पूर्ण सौरमण्डल गोलाकार है। इतना ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण विश्व, आकाश, पृथ्वी का भ्रमण मार्ग, समस्त लोक-लोकान्तरों की कक्षाएँ, सत्त्व, रज, तम कण, परमाणु आदि सभी गोल हैं। यह सम्पूर्ण वर्णन विज्ञान के अनुकूल है।

आठवें समुल्लास में भी यही बताया गया है कि

नक्षत्रादि के भ्रमण कक्ष भी गोल हैं।

नवमें समुल्लास में बताया गया है कि सूर्य सौर मण्डल के केन्द्र में होता है।

दसवें समुल्लास में आकर्षण-अनुकर्षण पर विचार किया गया है। यह जगत् ईश्वर, जीव और प्रकृति का समूह है। ईश्वर और जीव चेतन हैं, प्रकृति जड़ है। ईश्वर जीव में, कारण प्रकृति में और कार्य जगत् में बाहर-भीतर सर्वत्र व्याप्त है। वह जगत् के बाहर भी है। ईश्वर जीव और जगत् को धारण करता है। ये दोनों ईश्वर द्वारा धारित उसी में रहते हैं। ईश्वर इनका आकर्षण करता है। जीव एवं प्रकृति में भी आकर्षण है। यजुर्वेद अध्याय ३४ मन्त्र संख्या ३१ में कहा गया है-

आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

अर्थ- परमात्मा सब लोगों के साथ आकर्षण गुण रहित वर्तमान है। अनन्त बल से, आनन्दपूर्वक क्रीड़ा एवं व्यवहार का साधन ज्ञान से, सत्य विज्ञान को, ज्ञानियों को, मोक्ष को, मनुष्यों को प्राप्त कराता हुआ परमेश्वर सब लोकों को धारण करता है, सब लोकों को प्रकाशित कर सबको जानता है।

यदा ते मारुतीर्विंशस्तुभ्यमिन्द्र नि येमिरे।
आदित्ते विश्वा भूवनानि येमिरे।।

ऋ. ८.१२.२९

अर्थ- हे परमैश्वर्यवन् भगवन्! जिस समस्त तेरे मरुत से सम्बद्ध, लोक-लोकान्तर तेरे आकर्षण आदि नियमों में स्थिर हो जाते हैं, उसके पश्चात् समस्त लोक व्यवस्थित हो जाते हैं।

ग्यारहवें समुल्लास में प्रकाश्य-प्रकाशक विषय पर विचार किया गया है। वेदों के अनुसार इस जगत् में दो प्रकार के लोक हैं। (१) स्वत: ज्योति और परत: ज्योति अर्थात् स्वयं प्रकाशक तथा अन्यों के प्रकाश से प्रकाशित।

बारहवें समुल्लास में विविध मान यथा कालमान, क्षेत्रमान, दूरमान और भारमान। इसी समुल्लास में यह भी सिद्ध किया गया है कि वर्तमान में सृष्टि को उत्पन्न हुए कितना समय व्यतीत हुआ है। वैदिक वाङ्मय में सृष्टि की कुल आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष मानी गई है। ब्रह्मयुग के अनुसार युग चार हैं। कलियुग, द्वापर युग, त्रेता युग और सत युग। कलियुग में ४,३२,००० वर्ष है, इसमें ३६,००० वर्ष सन्ध्या आदि में और ३६,००० वर्ष सन्ध्यांश अन्त में मिले होते हैं। इसी प्रकार द्वापर में कलियुग से दोगुने ८,६४,००० वर्ष जिसमें ७२,००० वर्ष सन्ध्या के आदि में और ७२,००० वर्ष अन्त में सन्ध्यांश मिले होते हैं। त्रेतायुग में १२,९६,००० वर्ष जिसमें १,०८,००० वर्ष सन्ध्या आदि में और १,०८,००० वर्ष सन्ध्यांश अन्त में मिले होते हैं। सतयुग में १७,२८,००० वर्ष जिनमें १,४४,००० वर्ष सन्ध्या आदि में और १,४४,००० वर्ष सन्ध्यांश अन्त में मिले हैं।

एक चतुर्युगी में ४,३२,०००+८,६४,०००+१२,९,०००+ ७,२८,०००=४३,२०,००० वर्ष होते हैं। ७१ चतुर्युगी अर्थात् ४३,२०,०००×७१=३,०६,७२,०००० वर्ष का एक मन्वन्तर होता है। एक ब्राह्मदिन में १४ मन्वन्तर=४३,२०,०००×१४ =४,२९,४०,८०,००० वर्ष एक ब्राह्म दिन=१००० चतुर्युगी=४३,२०,०००×१०००=४,३२,०००००० वर्ष स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुसार ''ते चैकस्मिन्ब्राह्मदिने १४ चतुर्दश भुक्त भोगा भवन्ति। एक सहस्त्रं चतुर्युगानि ब्राह्मदिनस्य परिमाणं भवति।'' अर्थात् इनमें १४ मन्वन्तर प्राणियों के 'भुक्त-भोग' काल हैं तथा १००० चतुर्युग एक ब्राह्म दिन का मान है। प्रश्न होता है कि ४,३२,००,००,०००- ४,२९,४०,८०,०००=२,५९,२०,०००वर्ष का क्या होगा?

स्वामी दयानन्द के अनुसार तो यह सृष्टि उत्पत्ति का काल है। कुछ दूसरे लोगों ने इस काल के १५ भाग किये तो १७,२८,००० वर्ष आए तो उनको यह उचित लगा कि प्रत्येक मन्वन्तर के पूर्व तथा सृष्टि के अन्त में इस राशि को सन्धि काल के नाम से जोड़ दिया जाए, परन्तु किसी भी वैदिक ग्रन्थ में इसका समर्थन नहीं है। मनुस्मृति द्वारा की गई कालगणना में सृष्टि की आयु में सन्ध्या एवं सन्ध्यांश काल तो पूर्व में ही जुड़ा हुआ है। उन्होंने मन्वन्तर के पूर्व १७,२८,००० वर्ष या एक सतयुग और जोड़ने को कहीं नहीं कहा है, फिर क्या प्रत्येक मन्वन्तर के प्रारम्भ में दो सत्ययुग होंगे? यह विचार ही चौंकाने वाला है। यदि यह कहें कि मनुस्मृति का विषय कालगणना करना नहीं है तो यह अत्यन्त हास्यास्पद होगा। सृष्टि उत्पत्ति तो मनुस्मृति

का मुख्य विषय है। फिर यह कहना कि संकल्प मन्त्र सन्धिकाल का समर्थन करता है नितान्त असत्य है। यह मानना भी गहरी अविद्या का सूचक है कि २,५९,२०,०००वर्ष में सृष्टि उत्पत्ति नहीं हो सकती।

हम मनुष्य ही एक वर्ष का समय लगाकर जो भवन निर्माण करते हैं वह ५०० वर्ष तक चलता है फिर ब्रह्म ढाई करोड़ वर्ष लगाकर सृष्टि उत्पन्न करता है तो वह ४३२ करोड़ वर्ष तक क्यों नहीं चलेगी? क्या ब्रह्म हमसे कम कुशल कारीगर है? अन्त में आप पृष्ठ १९४ पर स्वीकार करते हैं कि दोनों मान्यताओं का कोई प्रमाण नहीं है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ही नहीं, मनु की गणना के अनुसार भी सृष्टि की वर्तमान आयु १९६०८५३११८ वर्ष हो चुकी है। वैदिक काल गणना में सूक्ष्मातिसूक्ष्म कालत्रुटि माना गया है जो एक सैकण्ड का ३३७५० वाँ भाग होता है। दिन-रात को ३० मुहूर्त में बाँटा गया है। माह चन्द्रमा की दृष्टि से माना गया है। शुक्ल प्रतिपदा से लेकर अमावस्या तक के काल को ३० तिथियों में दर्शाया गया है। पन्द्रहवीं तिथि पूर्णिमा और तीसवीं तिथि अमावस्या है। बारह चन्द्रमास का एक वर्ष माना जाता है। इसे सौर-वर्ष से मिलाने के लिए प्रत्येक ३२ चान्द्र मास बाद एक मास और पुरुषोत्तम मास के नाम से जोड़ा जाता है।

तेरहवें समुल्लास में क्षेत्र विज्ञान, चौदहवें समुल्लास में काल विज्ञान, पन्द्रहवें समुल्लास में व्यक्त काल की प्रवृत्ति तथा सात वारों पर विचार किया गया है। लेखक के अनुसार वैदिक वाङ्मय में वारों का नाम नहीं आया है, जो सत्य है।

सोलहवें समुल्लास में वर्ष किस दिन से प्रारम्भ होना चाहिए- इस विषय पर विचार कर बताया गया है कि संवत्सर का प्रारम्भ वसन्त ऋतु में आने वाला विषुव दिन है। जिस दिन सूर्य भूमध्य रेखा पर आता है वही दिन संवत्सर का प्रथम दिन होता है। सुविधा के लिए इसे चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा माना जाता है।

इसी विषय पर **सत्रहवें समुल्लास** में भी विचार किया गया है।

हमारे देश में पूर्व में उज्जैन में सूर्योदय से नया दिन प्रारम्भ होता रहा है। हमारी अकर्मण्यता से आजकल ग्रीनविच को नवीन दिन का प्रारम्भ माना जाता है- **अठारहवें समुल्लास** में इसी पर विचार किया गया है। **उन्नीसवें समुल्लास** में मास का प्रारम्भ कब हो- इस पर विचार कर निर्णय लिया गया है कि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से मास का प्रारम्भ होता है। **बीसवें समुल्लास** में छः ऋतुओं के विषय में चर्चा कर शतपथ ब्राह्मण २.१.३.१ में **वसन्तो ग्रीष्मो वर्षाः ते देवता ऋतवः। शरद्धमन्तशिशिरास्ते पितरः** को मान्यता देकर बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर कुल छः ऋतुएँ होती हैं।

२१ वें समुल्लास में ऋतुएँ सूर्य के द्वारा बनती हैं यह बताया गया है।

बाइसवें समुल्लास में पुनः जगत् की अवस्था पर विचार हुआ है। २३ वें और २४ वें समुल्लासों में प्रलय के विषय में बताया गया है जो सब वैदिक वाङ्मय के अनुसार है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लेखक ने ज्योतिष विषय को अपने सम्पूर्ण अंगों सहित बताने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। कोई भी फलित ज्योतिषी इस विवरण पर अंगुली नहीं उठा सकता है।

अगले १४ समुल्लासों में विद्वान् लेखक ने फलित ज्योतिष के विभिन्न अंगों पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर कुछ आक्षेप किये हैं जिनका उन्हें उत्तर देना है। हम यहाँ संक्षेप में उन पर भी विचार करते हैं। **पच्चीसवें समुल्लास** में लेखक ने तर्कों और प्रमाणों की झड़ी लगाते हुए यह सिद्ध करने में सफलता प्राप्त की है कि फलित ज्योतिष मिथ्या है। विज्ञान १००० प्रयोगों में से यदि १ प्रयोग में भी परिणाम अन्य से अलग आता है तो उसे सिद्धान्त नहीं मानता। सिद्धान्त तभी बनता है जब सभी प्रयोगों का परिणाम एक सा ही होवे, परन्तु फलित में देखते हैं कि एक ही विषय पर अलग-अलग ज्योतिषी अलग-अलग परिणाम घोषित करते हैं। उदाहरणार्थ डॉ. वाल्टन फ्रैंकलिन ने अपने जन्म का दिन वा समय लिखकर छः ज्योतिषियों को दिया और पूछा कि ''मेरा विवाह कब होगा?'' सबने भिन्न-भिन्न समय बताए। किसी ने यह नहीं बताया कि तुम तो विवाहित हो। फिर फलित के प्रसिद्ध ज्योतिषी महामहोपाध्याय सुधारक द्विवेदी, काशी, पं. सीताराम झा, श्री पुरुषोत्तम

जोशी, उज्जैन आदि फलित को मिथ्या स्वीकार करते हैं।

अमेरिका के १८६ प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के अनुसार ज्योतिष की भविष्यवाणियाँ बकवास हैं। इन वैज्ञानिकों में से १८ नोबेल पुरस्कार प्राप्त हैं।

२६वें समुल्लास में फलित ज्योतिष की उत्पत्ति बताई गई है। फलित ज्योतिष की प्रत्येक बात कल्पना पर खड़ी है। फलित ज्योतिष की पुस्तकें ज्ञान-विज्ञान से शून्य और ज्ञान-विज्ञान के विरुद्ध हैं।

२७वें समुल्लास में मुहूर्त पर विचार हुआ है। फलित ज्योतिष के अनुसार अभीष्ट कार्य की सफलता अथवा सिद्धि के लिए एक निश्चित समय होता है, वह मुहूर्त है। इसी मुहूर्त में किया गया कार्य सफल होता है। अन्य समय में किया हुआ कार्य सफल नहीं हो सकता है। इसके विरोध में चरक संहिता में लिखा है, ''**कालः पुनः परिणामः**'' वस्तु में परिणाम ही काल है, परिणाम न हो तो काल की गणना ही संभव नहीं। काल जड़, निष्क्रिय और नित्य है। अनादि, अनन्त है। सर्वत्र, सर्वदा एक समान रहता है। किसी कार्य की सफलता, असफलता में निमित्त नहीं है, यदि होता तो इसका भी विचार कर्म के साथ अवश्य होता। नीतिकारों ने कहा है कि शुभकार्य को शीघ्र प्रारम्भ करना चाहिए, विलम्ब नहीं होने देना चाहिए। साथ ही लेखक ने **२८वें समुल्लास** में वारों की व्याख्या की है। सात वारों के भिन्न-भिन्न फल बताये हैं। फलित में रविवार को स्थिर वार, सोमवार को अस्थिर वार, मंगलवार को क्रूर वार, बुधवार को साधारण वार, गुरुवार को लघुवार, शुक्रवार को मृदुवार, शनिवार को तीक्ष्ण वार माना गया है। यह सम्पूर्ण मान्यता वेद के विरुद्ध है। वारों का न तो वेदों से सम्बन्ध है और न आकाश से सम्बन्ध है, न ग्रहों से सम्बन्ध है, न वेदों में वारों का नाम ही है, न वारों का शुभ-अशुभ से कोई सम्बन्ध ही है। फिर लेखक ने वारों को शुभ-अशुभ मानने वालों से १९ प्रश्न किये हैं।

२९वें समुल्लास में तिथियों के फलों पर विचार हुआ है। फलित ज्योतिषियों ने पन्द्रह तिथियों को ५ भागों में विभक्त किया है जो इस प्रकार है-

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
१	२	३	४	५
६	७	८	९	१०
११	१२	१३	१४	१५

इन तिथियों के विभिन्न फल कहे गए हैं जो निम्न प्रकार है-

नन्दा नामक तिथियाँ (१,६,११) पूर्व दिशा में यात्रा करने के लिए, भद्रा तिथियाँ (२,७,१२) दक्षिण दिशा में यात्रा करने के लिए, जया नामक तिथियाँ (३,८,१३) पश्चिम में यात्रा के लिए, पूर्णा तिथियाँ (५,१०,१५) उत्तर दिशा के लिए शुभ हैं। रिक्ता तिथियों (४,९,१४) में यात्रा नहीं करना चाहिए।

फिर सम्मुख दिशाशूल हो तब भी यात्रा नहीं करना चाहिए।

मुहूर्त दर्पण में अमावस्या व पूर्णिमा के दिन यात्रा का निषेध भी किया गया है। यह पूर्णा तिथियों में कहे गए फल के विरुद्ध है। वर्तमान युग में इस प्रकार की अविद्याजन्य बातों को कोई भी नहीं मानेगा।

अगले समुल्लास में करण, नक्षत्र, योग एवं पंचांग विषय, मास-वर्ष-युग विषय, हस्तरेखा विषय, अंक ज्योतिष, भविष्यवाणी विषय पर फलित ज्योतिषियों के विचार देकर उनका तर्कसंगत खण्डन किया गया है।

मैं उन सब पर लिखकर पाठकों का समय व्यर्थ नहीं करना चाहता हूँ। अन्तिम समुल्लास में स्वामी दयानन्द की एतत् विषयक मान्यता दी गई है जो पढ़ने योग्य है।

सम्पूर्ण पुस्तक वैदिक मान्यता के समर्थन में लिखी गई है। पुस्तक पठन योग्य ही नहीं वरन् हर परिवार में रखने योग्य है। लेखक स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती वैदिक वाङ्मय के जाने-माने विद्वान् हैं। उन्होंने इस पुस्तक की रचना में वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, मनुस्मृति आदि के प्रमाणों की झड़ी लगा दी है। एक के स्थान पर दसियों प्रमाण देकर वैदिक मान्यता की सिद्धि की है। पुस्तक की रचना में किया गया उनका कठोर श्रम स्तुत्य है। मैं उनके स्वस्थ्य, सुखी, दीर्घजीवन की कामना करता हूँ। इतिशम्।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ जनवरी २०१७ तक)

१. अनिता आर्य, तिलकनगर, नई दिल्ली २. श्री बलराम आर्य, पानीपत ३. श्री तेजवीर सिंह व श्रीमती बाला त्यागी, दिल्ली ४. श्रीमती ओमलता चौहान, कोटा ५. श्री सुनील बंसल, अजमेर ६. आचार्या आदेश, ऋषि उद्यान, अजमेर ७. सुश्री राजबाला, ऋषि उद्यान, अजमेर ८. श्री महावीर प्रसाद यादव, जयपुर ९. श्री ओमप्रकाश लड्ढा, अजमेर १०. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर ११. श्री अशोक राव, लातूर १२. श्री सदानन्द आर्य, हरिद्वार १३. श्री हरसहाय सिंह, बरेली १४. स्वस्तिकाम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती १५. श्री रामजीवन मिश्र, जयपुर १६. श्री धर्मवीर सिंह, नई दिल्ली १७. श्री राजेन्द्र सक्सैना, कोटा १८. श्री नवीन मिश्र, अजमेर १९. डॉ. प्रवीण माथुर व डॉ. ऋतु माथुर, अजमेर २०. श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर २१. श्री पुष्पेन्द्र देव व श्रीमती पार्वती देवी, छोटी सादड़ी, प्रतापगढ़ २२. श्री रमेशचन्द पुरोहित, भीलवाड़ा २३. श्री विनोद कुमार गर्ग, कलांवाली।

परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ जनवरी २०१७ तक)

१. अनिता आर्य, तिलक नगर, नई दिल्ली २. श्रीमती मन्जु गुडवानी ३. श्री सांवरलाल, ऋषि उद्यान, अजमेर ४. सुश्री दीपशिखा, अजमेर ५. श्री आर.आर. विजयवर्गीय, अजमेर ६. श्रीमती सुशीला शर्मा, अजमेर ७. श्री सुभाष काबरा, अजमेर ८. श्रीमती मैना देवी, अजमेर ९. श्री विजयसिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. श्रीमती कृष्णा देवी आर्य, रोहतक ११. श्रीमती अदिति गुप्ता, दिल्ली १२. श्री अशोक सोनी, जावला, नागौर १३. श्री गोवर्धनप्रसाद खण्डेलवाल, अजमेर १४. श्री विवेक चण्डक, अजमेर १५. श्रीमती सरोज, अजमेर १६. श्री बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर १७. श्री प्रेम दुग्गल, सूरत १८. श्रीमती सुशीला, विजयनगर, अजमेर १९. श्रीमती कमला देवी, विजयनगर, अजमेर २०. श्री गोपाल, उज्जैन २१. श्रीमती सुन्दर देवी, अजमेर २२. श्रीमती सरोजबाला, झज्जर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सबको उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

शङ्का समाधान - १९

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का- हमारे यहाँ स्विष्टकृत मन्त्र में मिठाई, प्रसाद और फल भी डालते हैं। मिश्रित भात घी की आहुतियाँ बलिवैश्वदेव यज्ञ में दस आहुतियाँ चढ़ाते हैं। आपका कहना है स्विष्टकृत में भात और मिला घी की आहुति दें। शङ्का यह है कि दोनों में भात घी की आहुति सही है?

सोनालाल नेमधारी, मॉरिशस

समाधान-स्विष्टकृत आहुति के सन्दर्भ में- परोपकारी नवम्बर प्रथम २०१७, पृ. २२-२४ देखें। पुनरपि स्विष्टकृत का हव्य घृत अथवा भात है। सूत्रकार घृतमिश्रित भात भी मानते हैं। एतदतिरिक्त मिष्टान्न, प्रसाद, फल कोई भी पदार्थ स्विष्टकृत का हव्य नहीं है। भात के स्थान पर यह सब पदार्थ चलन में आये हैं। महर्षि का स्पष्ट लेख घृत अथवा भात है। अत: यह आहुति घृत अथवा भात से देनी चाहिए। सूत्रकार भी घृत मिश्रित भात का विधान करते हैं। अन्य मिठाई-गुड़-शक्कर आदि हव्य नहीं हैं।

बलिवैश्वदेव- गृहस्थ द्वारा प्रतिदिन क्रियमाण कर्म है। इसमें पाकशाला में तैयार भोज्य पदार्थ से ही दस आहुति देनी होती हैं। किन्तु खट्टा, लवणान्न और क्षार, ये हव्य पदार्थ नहीं हैं अर्थात् जिन पदार्थों में नमक, नींबू मिश्रित हो चुके हैं, उन भोज्य पदार्थों को छोड़कर- घृत, मिष्टयुक्त अन्न-इनमें भात, रोटी, हलुआ, खीर आदि पदार्थ हव्य हैं।

गृहस्थ की पाकशाला में पककर तैयार भोजन से हव्य लेकर चूल्हे से अग्नि ले उसे पृथक् रखकर उस पर **अग्नये स्वाहा** आदि दस आहुतियाँ उस तैयार भोज्य पदार्थ से देनी चाहिएं। इसमें भात अनिवार्य नहीं है।

बलिवैश्वदेव का ही भाग आहुति प्रदान के अनन्तर तैयार भोजन से कुछ भाग लेकर थाली अथवा भूमि पर कोई पत्ता आदि रखकर **ओम् सानुगायेन्द्राय नमः** आदि मन्त्रपूर्वक रखने का विधान है।

व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

पता- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

परोपकारिणी सभा के एक पूर्वप्रधान
आर्यनेता महाशय कृष्ण जी

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

महाशय कृष्ण जी आर्यसमाज के, हिन्दू जाति के एक गुणसम्पन्न दूरदर्शी नेता थे। आपका जन्म सन् १८८१ में हुआ और निधन २४ फरवरी मास सन् १९६३ में हुआ। वे यौवन की चौखट पर पैर धरते ही निडर, विद्रोही, सुधारक आर्यसमाजी बन गये। अपने पिता के निधन पर बिरादरी की धमकियों से कतई आतंकित न हुये। पौराणिक कर्मकाण्ड न करने पर बहिष्कार के मिज़ाईल छोड़े जाने की धमकी सुनकर भी न झुके। तब मोहमयी माता ने आपका साथ दिया।

जन्म के समय आपको राधाकृष्ण नाम दिया गया। आर्यसमाजी बने तो पौराणिक नाम का आर्यसमाजीकरण करके **'महाशय कृष्ण'** के नाम से विख्यात हुये। उर्दू पत्रकारिता के इस पितामह के कारण उर्दू के एक लोकप्रिय शब्दकोश 'फ़ीरोज-उल-लुग़ात' में 'महाशय' शब्द का प्रवेश पाना हमारे लिये एक गौरव का विषय है। आप कुछ समय तक आर्यसमाज के अंग्रेजी साप्ताहिक के भी पंजाब में सम्पादक रहे।

सन् १९०५ में आपने अपने देशप्रसिद्ध क्रन्तिकारी उर्दू साप्ताहिक 'प्रकाश' को जन्म दिया। इस साप्ताहिक ने देशभर में ऋषि मिशन तथा स्वराज्य की लहर की धूम मचा दी। मात्र २६ वर्ष की आयु में महाशय कृष्णजी को लाला लाजपतराय, लाला पिण्डीदास, श्रीमान् महाकवि फ़लक, मेहता आनन्द किशोर आदि आर्य देशभक्तों के पक्ष में लिखने के कारण लन्दन के एक गोरे सम्पादक ने 'A fiery editor of Lahore' लिखकर इंग्लैण्ड में आपकी और आर्यसमाज की धूम मचा दी। एक सज्जन ने एक पुस्तक में इस स्वर्णिम घटना को विकृत करके यह लिख दिया है कि आपको यह उपाधि दी गई। इतिहास ऐसे ही प्रदूषित किया जाता है। देश में इससे पूर्व भी कई प्रखर देशभक्त सम्पादक गोरों की आँखों में खटकते रहे, परन्तु गोरों ने और किसी को इससे पहले 'एक आग्नेय सम्पादक' कहा हो, इसका प्रमाण मुझे तो मिला नहीं। लन्दन में संसद में महाशय जी का वह लेख पहुँच गया, जिस पर उन्हें 'A fiery editor of Lahore' घोषित किया गया।

जब 'प्रकाश' कार्यालय को घेरा गया- श्री पं. विश्वम्भर दत्त जी के साथ बटाला होते हुये महाशय जी गुरुकुल काँगड़ी पहुँचने वाले थे तो वहीं लाहौर से सूचना मिली कि लाला लाजपतराय जी के निष्कासन पर गर्म-गर्म सम्पादकीय लिखकर आन्दोलन करने के कारण पुलिस ने, गुप्तचरों ने 'प्रकाश' को चारों ओर से घेर लिया है। महाशय जी के बन्दी बनने की बहुत चर्चा थी। दोनों लाहौर लौट गये। बात तो ठीक थी, परन्तु जाने महाशय जी पर तब केस क्यों न बनाया गया। समाचार तो फैल गया।

कुछ दिन लाहौर गिरफ़्तारी की बाट देखकर दोनों काँगड़ी चले गये। महात्मा मुंशीराम जी स्वत: प्रेरणा से महाशय जी की रक्षा में मैदान में उतर आये। दिल्ली के एक चोटी के गोरे वकील से निर्णय कर आये कि मैं आपकी फ़ीस दूँगा, महाशय कृष्ण का केस आप ही लड़ेंगे। महाशय जी को आश्वस्त करके कहा कि केस के बनते ही मुझे तार करें, मैं सब करणीय उपाय करुँगा। यह सारी कहानी 'स्वामी श्रद्धानन्द की जीवन-यात्रा' ग्रन्थ में सविस्तार दी गई है।

सन् १८५७ के विप्लव के पश्चात्, विद्रोह का प्रथम अभियोग पटियाला में आर्यसमाज पर चलाया गया। एक साथ राज्य के प्रमुख सभी आर्य बन्दी शिविर में पकड़ कर रखे गये। तब रायबहादुर लालचन्द, भक्त ईश्वरदास सरीखे डी.ए.वी. पक्ष के नामी वकील नेता अभियुक्तों का केस लड़ने का साहस न बटोर सके। मोटी फ़ीस देने का महात्मा मुंशीराम जी ने आश्वासन दिया, परन्तु वे निडरता कहाँ से लावें? तब महात्मा मुंशीराम (जो वकालत छोड़ चुके थे) स्वयं काला गाउन पहनकर आर्य भाइयों का केस लड़ने को आगे आये। दीवान बद्रीदास, लाला वजीरचन्द, ला. द्वारकादास आदि वकील, आचार्य रामदेव और महाशय कृष्ण लोहे की दीवार बनकर महात्मा जी के पीछे खड़े हो गये। पटियाला के आर्यों की आग में सब कूद पड़े। महाशय जी की वे सेवायें आर्यों को सदैव सत्प्रेरणायें देती रहेंगी।

सन् १९१९ के मार्शल लॉ और जलियाँवाला के ख़ूनी काण्ड के समय महाशय जी को बन्दी बना लिया गया। तब आप 'प्रकाश' साप्ताहिक के अतिरिक्त 'दैनिक प्रताप' को भी जन्म दे चुके थे। आपके साथ और भी अनेक आर्य तब काल कोठरी में पहुँचाये गये।

मोपला काण्ड व शुद्धि आन्दोलन के कारण देशभर में सब ओर आर्यसमाज की जातीय सेवाओं व धर्म प्रचार के कारण धूम थी। आर्यों को मौत की धमकियाँ मिल रही थीं। महाशय कृष्ण

तन तानकर लेखनी का सुदर्शन चक्र चलाकर स्वामी श्रद्धानन्द जी के साथ खड़े थे। लोकतन्त्र में मतभेद की सम्भावना तो सदा रहती है। महाशय कृष्ण जी, महात्मा नारायण स्वामी जी, आचार्य रामदेव जी, पं. विश्वम्भर दत्त जी का स्वामी श्रद्धानन्द जी से मतभेद तो कई बार हुआ, परन्तु 'मनभेद' की बात तो सोची भी नहीं जा सकती। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ही आर्यसमाज के सर्वमान्य नेता थे। स्वामी जी भी अपने इन सब सहयोगियों को मान-सम्मान तथा यथोचित महत्त्व देते थे। आर्यसमाज में दो-तीन वाक्शूरों ने द्वेष-ईर्ष्या से महाशय कृष्ण जी के जीते जी (अब भी कहीं-कहीं यह विषैला प्रचार है) यह दुष्प्रचार किया कि महाशय कृष्ण जी स्वामी श्रद्धानन्द जी के शत्रु थे।

इन्हें क्या पता, महाशय जी के लिये स्वामीजी के मन में कितना प्यार था और महाशय कृष्ण ने अपने अन्तिम श्वास तक स्वामी जी की शान में, सम्मान में कितने धारदार लेख लिखे। 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' ग्रन्थ में दस्तावेजों के प्रमाणों से इस निराधार दुष्प्रचार की शव-परीक्षा कर दी गई है।

प्रबुद्ध पाठक ध्यान दें कि स्वामीजी के अमर बलिदान पर तत्काल पंजाब में जो सूचना देने के लिये फ़ोन किया गया, वह महाशय कृष्ण जी को ही किया गया। महाशय जी अपने सब संगी साथियों सहित तत्काल दिल्ली के लिये चल पड़े। महाशय जी के नाम वह फोन प्राणवीर महाशय राजपाल जी ने उठाया था। वे तब 'प्रकाश' के सहायक सम्पादक थे।

वीर भगतसिंह की टोली जब साण्डर्स हत्याकाण्ड में जीवन और मृत्यु के झूले में झूल रही थी, तब इस मण्डली का पहला क्रान्तिकारी जो बन्दी बनाया गया, वह महाशय कृष्ण जी का ज्येष्ठ पुत्र वीरेन्द्र था। इस स्थिति में भी महाशय जी ने वीरवर यतीन्द्रनाथ दास तथा राजगुरु, भगतसिंह और सुखदेव के लिये ओजस्वी लेख लिख-लिखकर देश को गर्माया व जगाया। देश व आर्यसमाज महाशय जी की उन सेवाओं पर जितना गौरव करे थोड़ा है।

मित्रो! अंग्रेजी राज से भी कहीं बढ़कर नेहरू युग में महाशय जी के 'दैनिक प्रताप' पर सरकार ने केस चलाये। ज़मानतें माँगी गईं। न्याय-तुला पर महाशय जी की लेखनी सदैव निर्दोष सिद्ध हुई। सरकार ही पराजित होती रही। डॉ. अम्बेडकर जी ने भी हाईकोर्ट के निर्णय मँगवाकर सुरुचि से पढ़े।

महाशय जी पर क्या-क्या लिखा जावे? हैदराबाद सत्याग्रह में आप सबसे बड़ा जत्था लेकर पहुँचे तो निज़ामशाही की कमर ही टूट गई। हैदराबाद के एक पुराने नामी कांग्रेसी ने अपनी एक पुस्तक में सरकार की उस समय की दयनीय स्थिति का चित्र खींचते हुये लिखा है कि सत्याग्रहियों के लिये कारागार में न कमरा, न भोजन और न उन्हें सम्भालने के कुछ साधन रहे। पूरे विश्व में आर्यसमाज का डंका बज गया। सिंध में सत्यार्थप्रकाश रक्षा आन्दोलन के भी आप एक सूत्रधार थे। आप परोपकारिणी सभा के प्रधान थे। बहुत रुग्ण थे। डॉक्टरों ने पूर्ण विश्राम का आदेश दिया। जो भी आर्यनेता पता करने जाता, महाशय जी उसे यही कहते **''नरेन्द्र (छोटे बेटे) से कहो मुझे अजमेर ऋषि मेला पर जाने दे। मुझे कुछ नहीं होगा। मुझे जाने दो। मेरे ऋषि का स्थान है।''** इस ऋषि भक्ति पर, इस धर्मानुराग पर बलिहारी!

इस सैनिक को सन् १९५८ में नरवाना पत्र लिखकर बड़े प्यार से एम.ए. करने की प्रबल प्रेरणा दी। क्यों? लिखा, माता आर्यसमाज की आज यही आवश्यकता है। यह माँ की माँग है। मुझे आज भी नरवाना स्कूल का वह कमरा याद है जिसमें स्कूल के सेवक ने पूज्य दूरदर्शी नेता का वह पत्र इस विनीत को दिया।

गुरुद्वारा सिगरेट केस के झूठे अभियोग में और अमानवीय यातनायें दिये जाने पर मेरे लिये जो लेख पर लेख लिखे, वे उस युग के आर्यों को आज भी याद हैं। मेरी डाक रोकी जाती थी। इस पर सरकार को आड़े हाथों लिया। फिर शरर जी ने लिखा, ''मैं आपके पुत्र वीरेन्द्र जी के साथ जेल में था। पुलिस मेरी भी डाक रोकती व तंग करती है।'' आपने बड़े प्यार से शरर जी को लताड़ लगाई- **''हर आर्य का मुझ पर अधिकार है। आपने वीरेन्द्र जी का नाम लेकर मेरे आर्यत्व का अपमान किया है।''** उनके लिये भी लिखा। शरर जी प्यार भरी झाड़ खाकर झूम उठे। उन्हीं के मुख से यह घटना सुनी थी।

एक-एक समाजसेवी आर्य युवक की पूरी जानकारी रखते थे। स्वामी सर्वानन्द जी सन् १९५८ में दिल्ली उन्हें मिलने गये। उन्हें कहा, जिज्ञासु जी ने कहा है कि आप स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की सेवाओं व उपलब्धियों पर एक ग्रन्थ लिख दें। जो आप जानते हैं वह कोई दूसरा नहीं जानता। इस पर महाशय जी ने कहा, ''जिज्ञासु के पत्रों में भी यही माँग होती है। मैं भी वही चाहता हूँ जो वह चाहता है, परन्तु स्वामी जी का जीवन इतना व्यापक है कि समझ नहीं आता कहाँ से आरम्भ करूँ।''

स्वामी सर्वानन्द जी विदा होने लगे तो पूछा, ''अब कहाँ जाओगे?'' स्वामी जी ने कहा, ''नरवाना होता हुआ जाऊँगा।''

झट से महाशय जी बोल पड़े, ''जिज्ञासु से मिलते हुये

जायेंगे?''

स्वामी जी ने कहा, ''जी हाँ।'' यह प्रश्न महाशय जी के बड़प्पन का प्रमाण है कि छोटे-छोटे सेवकों का पूरा-पूरा अता-पता रखा करते थे।

आर्यसमाज से इतना प्यार- स्वामी सर्वानन्द जी एक बार दिल्ली उन्हें मिलने गये, तब देश के नामी सम्पादकों का शिष्टमण्डल उन्हें मिलने आ गया। उन्होंने अपनी अखिल भारतीय संस्था का अध्यक्ष बनने की पत्रकारों के इस पितामह से विनती की। यह कितना बड़ा सम्मान था? फिर भी आपने अस्वीकार कर दिया। क्यों? आपने कहा, प्रधान बनकर आपकी सब माँगों व कार्यक्रमों में मुझे आपका साथ देना पड़ेगा। मुझे आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपना प्रधान चुन लिया है। मेरे लिये आर्यसमाज का हित सर्वोपरि रहेगा। **मैं नहीं चाहता कि आपका भी प्रधान पद स्वीकार करके किसी एक से अन्याय करूँ।** यह घटना मैं यदा-कदा सुनाता रहता हूँ। हम अपनी अल्पज्ञता व अदूरदर्शिता या स्वार्थवश कई बार महाशय कृष्ण के बड़प्पन, आर्यपन तथा समर्पण भाव का ठीक-ठीक मूल्याङ्कन नहीं कर पाते। यह हमारी भूल है।

याद मीठी आर्यों को आपकी आती रहेगी।
गीत जाति-प्रीत से भगवन सदा गाती रहेगी।।

विश्व पुस्तक मेला और परोपकारिणी सभा
एक कदम और...

प्रभाकर

बात ५-६ साल पहले की है। उन दिनों मैं गुरुकुल ऋषि-उद्यान का विद्यार्थी हुआ करता था। सर्दियों में गुरुकुल के आचार्य एवं कुछ वरिष्ठ विद्यार्थी दिल्ली जाया करते थे मेले में। पुस्तक मेले में। इस नाम का मतलब तो हमें पता था, पर ये होता कैसा है, कितना बड़ा-ये सब कौतूहल का विषय था। जब मेले से लौटकर आये साथियों से वहाँ की बातें सुनते तो उसमें बचपन की कहानियों जैसा ही रस होता। सुनाने वाला मानो जंग के मैदान से आया सैनिक हो। पर इन कहानियों में एक बात कष्ट देने वाली थी, वो यह कि ''इस साल एक लाख बाइबिल फ्री बाँटी गई, कुरान भी फ्री बाँटी गई।'' लेकिन वेद...? जवाब 'ना' में होता। इतने बड़े वेद कौन नि:शुल्क बाँटे, और कौन अनजान उन्हें रुचि से पढ़ने को तैयार हो? घूम-फिर कर बुद्धि एक ही नाम पर आ टिकती -'सत्यार्थप्रकाश'। आखिरकार यही आर्यों की जीवनदायिनी औषधि है और वेद के वास्तविक मन्तव्य को प्रकट करने वाली भी, मेले में यह भी नि:शुल्क बँटनी चाहिये। कुछ दिनों बाद पता चला कि परोपकारिणी सभा के अधिकारी एवं कार्यकर्ता पहले से ही इस विषय में योजना बन चुके हैं। उस समय सभा के कार्यकर्ता श्री दिनेश आर्य ने जैसे ही यह बात आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के समक्ष रखी, उन्होंने अपने स्वभाव के अनुरूप तुरन्त 'हाँ' कह दी और इसका कार्यभार श्री दिनेश आर्य को ही सौंप दिया।

डॉ. धर्मवीर जी अपने व्याख्यानों में एक प्रसंग सुनाया करते थे कि ''एक पादरी किसी सुनसान स्थान पर एक झोंपड़ी में बाइबिल फेंक रहा था। किसी ने उसे देख लिया और पूछा कि यहाँ तो कोई नहीं रहता, फिर क्यों एक पुस्तक बेकार फेंक रहे हो। पादरी ने कहा कि आज यहाँ कोई नहीं है, पर कभी कोई तो आयेगा और उस समय उसे जो सबसे पहली पुस्तक मिलेगी, वो बाइबिल होगी।'' ये प्रसंग सुनाकर फिर कहते कि ''आर्यसमाज में भी इतनी बड़ी सोच हो तो ही प्रचार कार्य होगा।'' इसलिये सत्यार्थप्रकाश के वितरण का प्रस्ताव उन्होंने बिना विलम्ब किये तत्काल स्वीकार कर लिया। यहीं से सत्यार्थप्रकाश की नि:शुल्क वितरण योजना का जन्म हुआ।

कार्य शुरु हुआ। 'परोपकारी' पत्रिका में विज्ञापन जाने लगा। आर्यों की ओर से दान भी आने लगा। प्रश्न उठा कि पुस्तक के कागज एवं जिल्द आदि की गुणवत्ता कैसी हो? निर्णय 'धर्मवीर' को ही करना था, इसलिये वही हुआ जो होना चाहिये था। पुस्तक ऐसी हो, जिसे नि:शुल्क समझकर कोई फेंकना चाहे तो भी ना फेंक सके। लगभग १०० रु. के लागत मूल्य की आकर्षक, बड़े प्रिन्ट में पुस्तक तैयार कराई गई। इस तरह विश्व पुस्तक मेला-२०१४ के नि:शुल्क वाले मैदान में 'सत्यार्थप्रकाश' परोपकारिणी सभा की ओर

से भी था।

हर बार इस मेले में सभा के लोग जाते थे, सभा नहीं जाती थी, पर इस बार सभा भी थी। योजना नई थी। पहला कदम था, सो अनुभव ना होने से लड़खड़ाहट तो लाज़मी थी। आखिर पहले कदम पर कौन नहीं लड़खड़ाता। पर वो पहला कदम ही दूसरे कदम का आधार बनता है, वो पहली लड़खड़ाहट ही अगले कदम को मजबूती देती है। पुरानी भूलों से सीख लेकर अगले वर्ष फिर 'सत्यार्थप्रकाश नि:शुल्क वितरण योजना' बनाई गई। इस बार नेतृत्व डॉक्टर साहब की धर्मपत्नी श्रीमती ज्योत्स्ना जी ने किया। इसी तरह तीसरे, चौथे, पांचवें वर्ष लगातार उन्हीं का नेतृत्व रहा और इस वर्ष २०१८ में भी यह कार्य बड़ी सफलता से सम्पन्न हुआ।

चीजें जितनी सरल लगती हैं, उतनी होती नहीं। कम संसाधनों में अधिक से अधिक कार्य करना एक चुनौती होती है। हमें सत्यार्थप्रकाश केवल बाँटना ही नहीं होता, उसके प्रति रुचि भी पैदा करनी होती है। प्रत्येक पाठक को उसकी मौलिक जानकारी भी देनी होती है। ऐसे में कई बार कोई विधर्मी-विरोधी आकर झगड़ा शुरू कर दे तो उसे कौन रोक सकता है? ऐसी एक घटना २०१६ में हुई जब एक मुस्लिम स्टॉल पर आकर झगड़ने लगा। उसे १४ वें समुल्लास से आपत्ति थी। संयोगवश डॉ. धर्मवीर जी वहाँ उपस्थित थे। शास्त्रार्थ का सा माहौल बन गया। अपने किसी मौलवी को बुलाकर चर्चा करवाने का बहाना लेकर वह व्यक्ति गायब हो गया। पर मौके पर उपस्थित 'सुदर्शन न्यूज' (टी.वी. चैनल) ने डॉ. धर्मवीर का साक्षात्कार लिया और उसे प्रसारित किया।

इसी प्रकार से आर्यसमाज के एक विशेष गुट, जिनकी तोड़-फोड़ की प्रवृत्ति रहती है-के कुछ लोग आकर जबरदस्ती पुस्तकें लेने लगे। हमारे ये कहने पर कि ''हम नये लोगों को ही नि:शुल्क दे रहे हैं'' वे हाथापाई पर उतारु हो गये और कुछ पुस्तकें उठाकर ले गये। शान्त रहने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। इस प्रकार की घटनाएँ नौ दिन के इस मेले में प्राय: घटती रहती हैं।

इस बार ६-१४ जनवरी के पुस्तक मेले में कुछ अनुभव नये थे, जो हमें सोचने का अवसर दे सकते हैं। इस मेले में आर्यसमाज के केवल तीन पुस्तक विक्रेता होते हैं-१. आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली २. परोपकारिणी सभा और ३. गोविन्दराम हासानन्द।

दिल्ली सभा बड़ी मात्रा में साहित्य और बड़े स्थान पर अच्छी साज-सज्जा एवं व्यवस्था करती है-यह एक सन्तोषजनक एवं सुखद बात है। साथ ही १० रु. में सत्यार्थप्रकाश के विक्रय का उनका कार्य भी सराहनीय है, परन्तु वहीं दूसरी ओर अन्य मत (ईसाई, इस्लाम) की उपस्थिति लगातार बढ़ रही है। संस्कृत ग्रन्थों की दुकान नाम मात्र की होती हैं। जो हैं, वे भी लगातार नदारद होती जा रही हैं। चौखम्भा प्रकाशन भी इस वर्ष देखने को नहीं मिला। इससे सहज ही अनुमान होता है कि संस्कृत के अध्येता लगातार घट रहे हैं।

प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक संस्था अपने विचार को फैलाने में पूर्ण स्वतन्त्र है। पर यहाँ तो सीधे-सीधे धोखाधड़ी होती है। बाइबिल के ऊपर 'पवित्र शास्त्र' लिखकर दिया जा रहा था, ताकि हिन्दू उसे अपनी धार्मिक पुस्तक समझकर पढ़े। एक स्टॉल पर 'वेद और कुरान कितने दूर कितने पास' पुस्तक दी जा रही थी। वेद, गीता, उपनिषद् और दर्शन के आधे-अधूरे वाक्यों से कुरान की मान्यताओं को सिद्ध करके हिन्दुओं को बहकाया जा रहा था। उदाहरण के तौर पर 'योग के आठ अंगों से यह सिद्ध किया जा रहा था कि नमाज पढ़ते वक्त भी शरीर के आठ अंग जमीन पर लगते हैं, अत: योग दर्शन में नमाज का विधान है।' इसी तरह के हास्यास्पद तर्कों को लिखकर दुकान में लगाया गया । हास्यास्पद उनके लिये, जो इसकी सत्यता जानते हैं, पर जो खाली दिमाग पर जोर नहीं डालना चाहते, उनके लिये तो यह एक खोज होती है। यह भी धर्मान्तरण का एक प्रकार है, जो बाहर से देखने में एकता के प्रयास जैसा लगता है। भोले हिन्दू ने या तो इन शास्त्रों को कभी देखा नहीं और देखा भी तो पूजा की अलमारी में सजे हुए। इस कारण ऐसी परिस्थितियों में उसे कोई भी कुछ भी कहता है, वह मान लेता है। यहाँ देखने लायक बात यह है कि सबकी आशाओं का केन्द्र हिन्दू ही है। मुसलमान को तो कोई नहीं बहकाता, ईसाई की तरफ तो कोई नहीं देखता। सब जानते हैं कि जो कमजोर है, मूर्ख है, उसे ही काबू

किया जा सकता है। इस दृष्टि से हिन्दुओं को निशाना बनाना सबसे आसान है। सबके धर्मों का खजाना यहीं से भरता है।

इस प्रकरण में एक बात सीखने और समझने को मिली कि किसी भी गलत बात का जवाब उसी प्रक्रिया से दिया जाये, जिस प्रक्रिया से ज्यादा असरदार हो। इस्लाम की इस साजिश से हमें कष्ट तो था पर हम सिवाय उनसे सवाल-जवाब के और कुछ कर नहीं पा रहे थे। आचार्य सनत् कुमार जी के शिष्य श्री इन्द्रजित् भी मेले में थे और सभा से सम्पर्क में थे। उन्होंने इस विषय में 'मेला सुरक्षा विभाग' को पत्र लिखा कि अमुक स्टॉल पर वेद के विषय में भ्रामक बातें की जा रही हैं, जो कि रोकी जानी चाहियें। इस पर सुरक्षा विभाग ने कार्यवाही करते हुए आपत्तिजनक बैनरों को हटवा दिया। हालांकि फिर भी अलग-अलग तरीकों से वे इस कार्य में लगे रहे।

अस्तु कुछ बातें प्रसन्नता का कारण बनीं तो कुछ खेद का। समाज में दोनों ही तरह के व्यक्ति होते हैं, सकारात्मक विचार वाले भी और नकारात्मक विचारों वाले भी। कई आर्यजन परोपकारिणी सभा की स्टॉल पर आये और सत्यार्थप्रकाश के वितरण की प्रशंसा की, मनोबल बढ़ाया और इस कार्य में आर्थिक सहयोग भी दिया। वहीं दूसरी ओर कुछ ऐसे व्यक्तियों से भी सामना हुआ जो आर्यसमाजी थे और नि:शुल्क सत्यार्थप्रकाश लेना चाह रहे थे, पर क्योंकि हमारा उद्देश्य नये लोगों को ही देना था, इसलिये हम पूछते कि क्या आपने पहले कभी सत्यार्थप्रकाश पढ़ा है? उनके हाँ कहने पर हम उन्हें कहते कि यह केवल नये पाठकों के लिये है। यह सुनते ही वे कहते कि ''हमने तो केवल सुना है इसके बारे में, पढ़ा कभी नहीं।'' जिन आर्यों के मुँह से निकला वाक्य प्रमाण होता था, उन्हें सीधे-सीधे मिथ्या बोलते भी देखा।

इस सबके बावजूद आर्यों से मिलने वाले सहयोग की मात्रा ही अधिक थी, जिसके लिये सभा सभी आर्यजनों का धन्यवाद ज्ञापित करती है। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने सभा के कार्यकर्त्ताओं के भोजन की व्यवस्था, प्रवीण वर्मा (लक्ष्मी नगर) ने ठहरने की व्यवस्था की, ये सब सहृदयता का परिचायक है। दिल्ली के कुछ स्नेहीजनों के भी हम आभारी हैं, जो समय-समय पर सहयोग करते रहे, उनमें श्री अनिल आर्य (दिल्ली पुलिस) श्री लक्ष्मण जिज्ञासु (पं. लेखराम वैदिक मिशन), श्री शिव कुमार मदान एवं श्री रमेश आर्य (आर्यसमाज जनकपुरी-सी ब्लॉक)-ये सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

जिनकी गरिमामयी उपस्थिति ने कार्यकर्त्ताओं में ऊर्जा का संचार किया, उनमें परोपकारिणी सभा के कार्यकारी प्रधान डॉ. सुरेन्द्र कुमार, महाशय धर्मपाल (एम.डी.एच.), श्री विनय आर्य (मन्त्री-आर्य प्रतिनिधि सभा), श्री विरजानन्द दैवकरणि (सभा सदस्य), श्री कन्हैयालाल आर्य (सभा सदस्य), डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी' (सहनिदेशक-केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय) आदि सबने अपनी प्रेरणादायक उपस्थिति से उत्साहवर्धन किया।

जिनके सौजन्य से यह 'सत्यार्थ प्रकाश वितरण' सफल हुआ- दो से ढाई हजार सत्यार्थ प्रकाश, ऋषि जीवन चरित्र (लगभग ३०००), आर्याभिविनय (लगभग ३०००), ये सब पुस्तकें प्रतिवर्ष इस मेले में वितरित की जाती हैं। इन सब पुस्तकों का वितरण **श्री शिवकुमार चौधरी जी** के सौजन्य से किया जाता है। चौधरी जी सभा को अन्य कार्यों में भी सहयोग करते ही रहते हैं, पर इस कार्य के लिये परोपकारिणी सभा एवं समस्त आर्यजन उनके आभारी हैं। देश-जाति का हित बिना धन के सम्भव नहीं, और शिवकुमार चौधरी जी इन कार्यों में सदैव आगे रहते हैं, भविष्य में भी इसी प्रकार सहयोग प्राप्त होता रहे। उनका हार्दिक धन्यवाद।

एक और व्यक्तित्व- इस वर्ष इस योजना में एक और व्यक्तित्व जुड़ा- स्वामी विद्यानन्द सरस्वती- गुरुकुल गदपुरी, हरियाणा आपने भी इस कार्य की सफलता में १,२५,०००/- की धनराशि प्रसन्नतापूर्वक सभा को प्रदान की। सरलता व सादगी के धनी स्वामी जी ने ऋषि मेले पर भी कुछ पुस्तकें आधे मूल्य पर वितरित करवाईं थीं। इनका सहयोग सभा को निरन्तर प्राप्त होता है। सभा इनका भी धन्यवाद करती है।

जिसके माता और पिता विद्वान् न हों उनके सन्तान भी उत्तम नहीं हो सकते।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.९

१६ से ३१ जनवरी २०१८

संस्था-समाचार

जन्मदिवस पर यज्ञ- वसन्त पञ्चमी (२२ जनवरी) पर छोटी सादड़ी से श्री पुष्पेन्द्र देव व श्रीमती पार्वती देवी ने अपनी २७ वीं विवाह वर्षगांठ पर ऋषि-उद्यान में सपरिवार यज्ञ किया। रविवार २८ जनवरी को चकेरी, सवाई माधोपुर निवासी श्री अशोक मीणा ने अपने पुत्र ऋत्विज के जन्मदिन के अवसर पर ऋषि-उद्यान में सपरिवार यज्ञ किया। परोपकारिणी सभा की ओर से दोनों परिवारों को हार्दिक शुभकामनाएँ।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्मचारी, आर्यवीर, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। पिछले १५ दिनों में बलिया, आबू रोड, कांगड़ा, लातूर, दिल्ली, मुजफ्फरनगर, गाजियाबाद, हरिद्वार, शिमला, सोनीपत, सहारनपुर, सवाई माधोपुर, रोहतक, पानीपत, गुड़गांव, हजारीबाग और जीन्द आदि स्थानों से ६८ अतिथिगण ऋषि उद्यान पधारे। डी.ए.वी. कॉलेज, जालन्धर से ३० लोगों का एक दल दर्शनार्थ आया। म्यांमार से रोशन कुमार वेदांग पढ़ने के लिए आये हैं। शिकागो (अमेरिका) निवासी श्रीमती जागृति चन्द्रा ऋषि उद्यान देखने आयीं।

दैनिक प्रवचन-प्रातः कालीन प्रवचन में आचार्य सत्यानन्द वेदवागीश एवं स्वामी विष्वङ् परिव्राजक के व्याख्यान हुए। सायंकालीन प्रवचन में उपाचार्य सत्येन्द्र आर्य ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ पर चर्चा एवं शंका समाधान करते हैं। शनिवार सायंकालीन प्रवचन में श्रीमती रश्मिप्रभा एवं स्वामी सोमानन्द ने प्रवचन दिया। रविवार सायंकालीन सत्र में ब्र. अग्निवेश और ब्र. मनोज के प्रवचन हुए।

सामवेद पारायण यज्ञ- परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित जमानी आश्रम, इटारसी-होशंगाबाद में १९ से २१ जनवरी २०१८ तक आचार्य सोमदेव, आचार्य कर्मवीर और आचार्य सत्यप्रिय द्वारा तीन दिवसीय वार्षिकोत्सव समारोह एवं सामवेद पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ। तीनों दिन भजन, प्रवचन हुए। इस कार्यक्रम में स्थानीय लोगों के अतिरिक्त अनेक संन्यासी, वानप्रस्थी भी सम्मिलित हुए। इस अवसर पर प्रभातफेरी निकाली गयी, जिसमें बड़ी संख्या में बच्चों, युवाओं, महिलाओं एवं वृद्धजनों ने बहुत उत्साहपूर्वक भाग लिया।

पं. लेखराम जी के १२५वें बलिदान पर्व पर उनके साहित्य

'कुलियात आर्य मुसाफिर' का प्रकाशन

माननीय डॉ. धर्मवीर जी के मस्तिष्क में करने योग्य कई ठोस कार्य थे। देशभर के कई उत्साही आर्य सज्जनों व सुयोग्य कार्यकर्त्ताओं की प्रबल इच्छा का आदर करते हुए आपने अमर धर्मवीर पं. लेखराम के साहित्य 'कुल्लियात आर्य मुसाफिर' ग्रन्थ रत्न के प्रकाशन का मन बनाकर श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी को नये सिरे से उसका सम्पादन करने का अति कठिन कार्य सौंप दिया। सभा का गौरव इसी में है कि पं. लेखराम जी के १२५वें बलिदान महोत्सव तक हम इस ग्रन्थ रत्न को आर्यजनता को भेंट कर सकें।

जो भाई एक लाख रुपया देकर इस कार्य में सहयोगी बनेंगे, उनका चित्र पुस्तक में छपेगा। ग्यारह सहस्र या इससे अधिक देने वाले दानदाताओं का नाम आदर सहित ग्रन्थ में छपेगा। आर्यजनता उदार हृदय से परोपकारिणी सभा को इस ऐतिहासिक कार्य के लिये आर्थिक सहयोग करेगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

आर्य भाई-बहिनों को यह समझ लेना चाहिये कि इस श्रेष्ठ कार्य में सहयोगी बनकर आप पं. लेखराम जी का ही नहीं, स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, श्री लक्ष्मण आर्योपदेशक, महाशय चिरञ्जीलाल जी 'प्रेम', पं. देवप्रकाश जी, ठाकुर अमरसिंह जी, पं. शान्तिप्रकाश जी तथा धर्मवीर जी आर्य आदि अपने सब पूज्य महानुभावों के तर्पण का पुण्य कमायेंगे, जिन्होंने पं. लेखराम जी के मिशन के लिये आजीवन सतत साधना की।

ओम मुनि, मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आर्यजगत् के समाचार

१. प्रवेश प्रारम्भ- सर्वहितकारी सेवा संस्थान द्वारा संचालित 'जीवन प्रभात आवासीय विद्यालय बिजनौर रोड जलालाबाद' में विद्वान् आचार्यों के सान्निध्य में संस्कार, संस्कृति एवं संस्कृत रक्षार्थ गुरुकुलीय पद्धति द्वारा पठन-पाठन के साथ-साथ आधुनिक विषयों, यथा NCERT पाठ्यक्रम कक्षा ५ से ८ तक अंग्रेजी माध्यम, तत्पश्चात् यू.पी. बोर्ड द्वारा मान्यता प्राप्त पाठ्यक्रम द्वारा नि:शुल्क शिक्षण व्यवस्था हेतु वर्ष २०१८-२०१९ के लिये प्रवेश प्रारम्भ। प्रवेश हेतु आवेदन तिथि १० मार्च तक, परीक्षा १५ मार्च, परीक्षाफल १५ मार्च सायं ०५ बजे।

कार्यालय पता- कु. सन्तोषबाला आर्या, ए/११, आदर्श नगर, नजीबाबाद, जनपद बिजनौर, उ.प्र.-२४६७६३

सम्पर्क- ०९८९७१७२५३२

२. आर्यवीर दल सम्मानित- ६९वें गणतन्त्र दिवस पर पटेल मैदान, अजमेर में आयोजित सम्भाग स्तरीय कार्यक्रम में आर्यवीर दल एवं आर्य वीरांगना दल अजमेर द्वारा १००० छात्र-छात्राओं को संगीतमय सूर्यनमस्कार एवं योगासन सिखाया गया। गणतन्त्र दिवस के एक दिवस पहले २५/०१/२०१८ को प्रशासन द्वारा सांस्कृतिक संध्या के कार्यक्रम में भी आर्यवीर दल द्वारा संगीतमय योग की प्रस्तुति दी गई। सम्भागीय आयुक्त श्री हनुमान सहाय मीणा एवं जिलाधीश श्री गौरव गोयल ने आर्यवीर दल एवं आर्य वीरांगना दल के शिक्षक-शिक्षिकाओं को प्रशस्ति-पत्र देकर सम्मानित किया। इस अवसर पर आई.जी. मालिनी अग्रवाल, एस.पी. राजेन्द्रसिंह चौधरी एवं समस्त प्रशासन की भी उपस्थिति रही। इस कार्यक्रम में परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष नवाल भी उपस्थित थे। आर्यवीर दल के जिलाध्यक्ष विश्वास पारीक की अध्यक्षता में यह कार्य सम्पन्न हुआ।

३. मकर संक्रान्ति पर्व मनाया- आर्यसमाज नेमदारगंज, नवादा, बिहार ने स्थापना की शताब्दी के नये सत्र में प्रवेश कर प्रथम आयोजन मकर संक्रान्ति पर्व के मधुर मिलन कार्यक्रम से किया। नवादा जिला आर्य सभा के महामन्त्री श्री सत्यनारायण आर्य के पौरोहित्य में देवयज्ञ सम्पन्न कर नवनिर्मित भवन परिसर का शुभ उद्घाटन भी किया गया।

४. प्रवेश सूचना- गुरु विरजानन्द गुरुकुल महाविद्यालय, करतारपुर जो कि गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार से सम्बद्ध व पंजाब का एकमात्र गुरुकुल है, जिसमें सम्पूर्ण नि:शुल्क शिक्षा, आवास एवं भोजन की व्यवस्था है। गुरुकुल में कक्षा ६ से ११ और बी.ए. प्रथम वर्ष के नवीन छात्रों की प्रवेश परीक्षा १५ अप्रैल २०१८ प्रात: १० बजे गुरुकुल में आयोजित होगी। आवेदन पत्र भरकर १० अप्रैल २०१८ तक जमा करायें। आवेदन पत्र डाक द्वारा भी मंगाए जा सकते हैं। उत्तीर्ण छात्रों का साक्षात्कार एवं स्वास्थ्य परीक्षण भी उसी दिन होगा।

विशेष- सम्पूर्ण संस्कृतमय वातावरण के साथ-साथ उत्तम पुस्तकालय एवं मल्टीमीडिया की विशेष व्यवस्था है। आवेदन शीघ्र करें। सम्पर्क-०९८८८७६४३११, व्हाट्सअप-०९९८८१६३२३९, मेल-gurukulkartarpur@gmail.com

५. हवन महोत्सव सम्पन्न- महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर के तत्त्वावधान में मौ. भट्टी गेट में २५ कुण्डीय हवन महोत्सव एवं वैदिक भजन, प्रवचन, अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। मुख्य यजमान श्रीमती अनिल देवी एवं श्री विजय आर्य रहे, इस अवसर पर होनहार छात्रा सुमेधा एवं शीतल को भाष्य सहित चारों वेद (१४ भाग) एवं १८ वैदिक ग्रन्थों के सेटों से सम्मानित किया। योगाचार्य मुकेश आर्य यज्ञ के ब्रह्मा रहे।

६. यज्ञशाला का शिलान्यास- संजय गांधी मैमोरियल सीनियर सैकेंडरी पब्लिक स्कूल धनौरा-लाडवा में यज्ञशाला का शिलान्यास स्वामी विदेह योगी की अध्यक्षता में व जस्टिस प्रीतमपाल, लोकायुक्त हरियाणा के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। साथ ही यज्ञशाला का उद्घाटन आचार्य देवव्रत, महामहिम राज्यपाल हिमाचल प्रदेश के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ।

७. योग-ध्यान, साधना शिविर- जम्मू-कश्मीर की सुरम्य एवं मनोरम पहाड़ियों में स्थित आनन्दधाम आश्रम (गढ़ी आश्रम) ऊधमपुर, जम्मू कश्मीर में आश्रम के मुख्य संरक्षक एवं निदेशक महात्मा चैतन्य स्वामी की अध्यक्षता एवं माँ सत्यप्रिया यति के सान्निध्य में दिनांक ८ से १५ अप्रैल २०१८ तक नि:शुल्क योग-ध्यान-साधना शिविर का आयोजन किया गया है, जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि का क्रियात्मक अभ्यास कराया जाएगा। इस अवसर पर स्वामी जी के ब्रह्मत्व में प्रतिवर्ष की भाँति सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन भी किया गया है।

सम्पर्क- ०९४१९१०७७८८, ०९४१९७९६९४९

८. स्थापना दिवस मनाया- आर्यसमाज खलासी लाइन, सहारनपुर में स्थापना दिवस, बसन्त पंचमी, वीर हकीकत राय

बलिदान दिवस पर विशेष यज्ञ हुआ। मुख्य यजमान डॉ. पूर्णचन्द्र शास्त्री सपत्नी रहे। यज्ञ श्री सुरेन्द्र कुमार चौहान के पौरोहित्य में हुआ। डॉ. राजवीरसिंह वर्मा ने भजनों की प्रस्तुति दी।

९. आर्यसमाज की जीत- आर्यसमाज फूलिया कलां, जि. भीलवाड़ा, राज. में विगत १९ वर्षों से फतेहसिंह एवं सम्पतसिंह लोढ़ा, निवासी फूलिया कलां वर्सेज आर्यसमाज फूलिया कलां का विवाद विशिष्ट न्यायालय शाहपुरा में वाद संख्या ५४/२०१३(६७) सन् २००० से चल रहा था, उसमें दि. १९.१२.२०१७ को अन्तिम निर्णय आर्यसमाज के पक्ष में आने से आर्यसमाज की जीत हुई है। उसके बाद में आर्यसमाज भवन के द्वितीय मंजिल पर दो कमरे एवं बरामदे में हॉल का निर्माण कार्य प्रगति पर हैं।

१०. वेदवेदाङ्गों का अध्यापन- पं. ऋषिराम आर्योपदेश महाविद्यालय (वेद गुरुकुलम्), कारलमन्ना (जिला), पालक्काड़ (केरल) में १५ अप्रैल २०१८ से यथाक्रम शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द एवं ज्योतिष आदि शास्त्रों के अध्यापनपूर्वक वेद का अध्यापन अनूचान पद्धति से प्रारम्भ हो रहा है। इसमें यथा-अवसर आमन्त्रित तत्तद्विषयक विशेषज्ञ विद्वानों की भी सहायता से एक गवेषणात्मक अध्ययन का पूरा-पूरा प्रयत्न होगा। उच्च माध्यमिक (१२वीं कक्षा) अथवा तत्समकक्ष योग्यता रखने वाले विद्यार्थी इसमें प्रविष्ट हो सकेंगे। यह गुरुकुल केरल के प्राचीन ग्रामों में सर्वोत्तम 'शुकपुरम् वैदिक ग्राम' में सर्वथा प्रदूषणमुक्त रमणीय प्राकृतिक परिवेश में अवस्थित है। गुरुकुल में अपनी गौशाला की भी व्यवस्था है। आवासीय व्यवस्था निःशुल्क रहेगी। स्थान सीमित है। अन्तिम स्वीकृति एक माह के निरीक्षण के बाद ही दी जा सकेगी।

सम्पर्क- ०९५६२५२९०९५, ०९४४६०१७४४०

ईमेल- aryopadeshakvidyalaykerala@gmail.com

११. शिविर- भगवानसिंह इण्टर कॉलेज मकहेरा, नगला झींगा, मथुरा में १५ से २७ जनवरी २०१८ तक आर्यवीर दल शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में १५० से अधिक विद्यार्थियों ने भाग लिया। २६ जनवरी के अवसर पर छात्रों ने भव्य व्यायाम प्रदर्शन भी किया। शिविर का संयोजन ब्र. योगेन्द्र आर्य ने किया। श्री कौशल आर्य, श्री जितेन्द्र आर्य आदि ने व्यायाम प्रशिक्षण दिया।

चुनाव समाचार

१२. आर्य उपप्रतिनिधि सभा, वाराणसी का चुनाव दि. २१ जनवरी २०१८ आर्यसमाज भोजूवीर, वाराणसी में सम्पन्न हुआ, जिसमें **प्रधान**- श्री अजित कुमार आर्य, **मन्त्री**- श्री प्रमोद आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री रविप्रकाश आर्य को चुना गया।

१३. आर्य समाज हरजेन्द्र नगर, कानपुर-७ का चुनाव दि. १४ जनवरी २०१८ को सम्पन्न हुआ, जिसमें **प्रधान**- श्री देवेन्द्र देव वर्मा, **मन्त्री**- श्री सियाराम, **कोषाध्यक्ष**- श्री सुबोध कुमार सिंह को चुना गया।

शोक समाचार

१४. परोपकारिणी सभा के अनन्य सहयोगी युवा उद्यमी श्री ऋषभ गुप्ता की दादी **श्रीमती हेमलता गुप्ता** (संस्थापक- Axiom Ayurveda) का ११ जनवरी २०१८ को ८९ वर्ष की आयु में निधन हो गया। उनका अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से, महर्षि दयानन्द लिखित संस्कार विधि के अनुसार किया गया। परोपकारिणी सभा दिवंगतात्मा को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए ईश्वर से परिवार के लिये धैर्य व साहस प्रदान करने की कामना करती है।

१५. दिवंगत श्री डॉ. भंवरसिंह निर्वाण की धर्मपत्नी **श्रीमती शान्ति कंवर** का देहावसान दि. ०१ फरवरी २०१८ को हो गया है। आपके पति श्री डॉ. भंवरसिंह निर्वाण ने परोपकारिणी सभा को जीवनपर्यन्त अपनी सेवाएं दीं। आप धार्मिक महिला थी तथा पूरा परिवार वैदिकधर्मी है। परोपकारिणी सभा परिवार दिवंगत आत्मा को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए, परिवारजनों के लिये प्रभु से साहस व धैर्य की प्रार्थना करता है।

परोपकारिणी सभा का वनवासी शिविर

महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में परतवाड़ा से २० किलोमीटर की दूरी पर स्वामी श्रद्धानन्द सेवा केन्द्र की ओर से वर्ष २०१८ का पहले युवा शिविर की तिथियाँ कुछ ही दिन में घोषित कर दी जायेंगी। शिविर में १५ से ३० वर्ष तक की आयु के युवक भाग लेंगे। उन्हें सन्ध्या हवन के प्रशिक्षण के साथ-साथ वैदिक सिद्धान्तों का आवश्यक ज्ञान और वैदिक संस्कार भी दिये जावेंगे।

जातिभेद, ऊँचनीच, अस्पृश्यता निवारण के लिये घर-घर, ग्राम-ग्राम ऋषि सन्देश सुनाने की युवकों को प्रबल प्रेरणा दी जावेगी। परोपकारिणी सभा का मार्गदर्शन व सहयोग सेवा केन्द्र को सदा प्राप्त रहता है और रहेगा। दानी सभा को सहयोग करें।

निवेदक- पंकज शाह-परतवाडा (शिविर संचालक), राहुल आर्य-अकोला (शिविर व्यवस्थापक)